thearyasamaj.org

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अराव्णः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-38 मई अंक-5

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

आर्य संकल्प

सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp3@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

मानव का सर्वांगीण विकास उत्तम शिक्षा से ही सम्भव

शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास का आधार है। इसी से व्यक्ति की पहचान बनती है, शिक्षा से ही संस्कार के बीच अंकुरित होते है। शिक्षा एक ऐसा तत्व है जहाँ से व्यक्ति के निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है, जिन पुरूषों का मन विद्या के विलास में तत्पर रहता, सुन्दर-शील-स्वभाव युक्त, सत्यभाषणादि नियम पालन युक्त और जो अभिमान अपवित्रता से रहित, अन्य मलीनता के नाशक, सत्योपदेश विद्यादान से संसारी जनों के दुःखों को दूर करने से सूभूषित, वेद विहित कर्मों से पराये उपकार करने में रहते हैं, वे नर और नारी धन्य है।

शिक्षा के संदर्भ में महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने लघु ग्रंथ व्यवहार भानु में उत्तर देते हुए लिखते हैं कि '' जिससे मनुष्य विद्या आदि शुभगुणों की प्राप्ति और अविद्या आदि दोषों को छोड़ के सदा अनान्दित हो सके, वह शिक्षा कहाती है।'' उनके अनुसार केवल अक्षर ज्ञान भर करा देना शिक्षा नहीं है, बल्कि जिस व्यवहार और आचार से व्यक्ति मानव मूल्यों को आत्मसात् कर सके ऐसी शिक्षा को ही श्रेष्ठ मानते थे। पठन-पाठन विषय पर सत्यार्थ प्रकाश के तृत्रीय सम्मुल्लास का प्रारम्भ करते हुए ऋषि कहते हैं- ''संतानों की उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभाव रूप आभूषणों का धारण कराना, माता-पिता आचार्य और संबंधियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मूंगा आदि रत्नों से युक्त आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान विषयाशक्ति और चोर आदि का भय

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	वेद प्रार्थना	2
4.	वेद सर्वमान्य	4
5.	योग द्वारा ही	10
6.	विचार शक्ति	14
7.	प्रेरणात्मक	17
8.	अंधविश्वास	22
9.	समाचार	30

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

मई

वेदाध्ययन का फल

पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम्॥

(ऋ० 9 । 67 । 32; सा० 1199)

शब्दार्थ– (यः) जो व्यक्ति, उपासक (ऋषिभिः) ऋषियों द्वारा (सम्, भृतम्) धारण की गई (पावमानीः) अन्तःकरण को पवित्र करने-वाली (रसम्) वेद की ज्ञानमयी ऋचाओं का (अध्येति) अध्ययन करता है (सरस्वती) वेदवाणी (तस्मै) उस मनुष्य के लिए (क्षीरम्) दूध, (सर्पिः) घी (मधु उदकम्) मधुर जल, शरबत आदि (दुहे) प्रदान करती है।

भावार्थ– वेदाध्ययन से क्या मिलता है? मन्त्र में वेदाध्ययन से मिलनेवाले फलों का सुन्दर वर्णन है।

वेद के अध्ययन और उसके अनुसार आचरण करने से मनुष्य के जीवन-निर्वाह के लिए सभी उपयोगी वस्तुओं की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति वेद का स्वाध्याय करते हैं उन्हें दूध और घी आदि शरीर के पोषक तत्त्वों की कमी नहीं रहती। वैदिक विद्वान् जहाँ जाते हैं वहीं घी, दुग्ध और शर्बत आदि से उनका स्वागत और सत्कार होता है।

जीवन की आवश्यकताओं की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को वेद का अध्ययन करना चाहिए।

स्वामी जगदीशवरानन्द ■

वेद प्रार्थना

आचार्य ज्ञानेश्वरार्य, रोजड़

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः।
मान्तः स्थुर्नो अरातयः॥

(ऋग्वेद 10/57/2, अथर्ववेद 13/1/59)

शब्दार्थ :- **मा** = नहीं **प्रगाम** = छोड़कर चलें **पथः** = सन्मार्गों को **वयम्** = हम **मा** = नहीं **यज्ञाद्** = यज्ञ को छोड़कर चलें **इन्द्र** = ऐश्वर्यशाली परमेश्वर **सोमिनः** = ऐश्वर्य युक्त होकर **मा** = नहीं **अन्तः** = अन्दर **स्थुः** = ठहरें **नः** = हमारे **अरातयः** = अदान भाव कंजूसी।

व्याख्या :- हे परमेश्वर! जब हम वेदादि सत्यशास्त्रों से अपने जीवन की तुलना करते हैं तो हमें यह स्पष्ट प्रतीत होती है कि हमनें सत्य मार्ग को छोड़ दिया है, आदर्श मार्ग को छोड़ दिया है, वेद मार्ग को छोड़ दिया है, महापुरूषों को बताये मार्ग को छोड़ दिया है, श्रेय मार्ग को छोड़ दिया है, देवयान को छोड़ दिया है, निःश्रेयस पथ को त्याग दिया है। प्रभो! आपसे यही हमारी प्रार्थना है कि अब आगे हम सन्मार्ग पर ही चलें।

निश्चित ही सत्यधर्म पर चलने में, आदर्श, न्याय, कर्त्तव्य पथ पर चलने में कष्ट आते हैं, बाधाएं आती हैं, विरोध होता है, अभाव आता है, आक्षेप किया जाता है, दुःखी होना पड़ता है किन्तु जब आपसे ज्ञान, बल, शक्ति, साहस, पराक्रम, धैर्य, उत्साह मिलेगा तो इन सब को हम सहन कर लेंगे। सत्यमार्ग से विचलित नहीं होंगे, घबरायेंगे नहीं, रुकेंगे नहीं, झुकेंगे नहीं, हताश-निराश नहीं होंगे, चलते ही रहेंगे, और अधिक गति से और अधिक आगे और अधिक आदर्शों के साथ बढ़ते ही रहेंगे।

प्रभुदेव! आपसे हमारी प्रार्थना है कि हम कभी भी यज्ञ करना न छोड़ें, परोपकार करना न छोड़ें, त्याग करना न छोड़ें, सेवा करना न छोड़ें, ये सब उत्तम कर्म हमारे जीवन का, हमारी दिनचर्या का अंग बन जाएँ। आदर्श दिनचर्या, व्यायाम, भ्रमण, स्नान, ध्यान, यज्ञ, वेदपाठ, स्वाध्याय, सत्संग, दान, सेवादि से रहित होकर धनोपार्जन न करें क्योंकि इन सब अनिवार्य, अपरिहार्य वेद निर्दिष्ट कर्त्तव्य कर्मों को छोड़कर ऐश्वर्य प्राप्त करने का प्रयास करेंगे तो वह ऐश्वर्य हमारे विनाश का कारण बन जायेगा।

आपको व आप के बताए सिद्धान्तों, नीति-नियमों, अनुशासनों, विधि-विधानों को छोड़कर जो व्यक्ति लौकिक धन-सम्पत्ति, पद-प्रतिष्ठा, साधन-सुविधा, ऐश्वर्य को प्राप्त करता है वह अनेक प्रकार के दोषों से ग्रस्त हो जाता है। धीरे-धीरे उसके विचारों, व्यवहारों में अनेक प्रकार की बुराईयाँ आ जाती हैं और उनका पता भी नहीं चलता है। इन बुराईयों से वह न केवल स्वयं अपने ही विनाश का कारण बनता है अपितु अपने परिवार, समाज, राष्ट्र को भी अपने कु कृत्यों से संतप्त करता रहता है।

सत्य मार्ग पर चलने के लिये आवश्यक है कि आप हमारे अन्तःकरण में जन्म-जन्मान्तर के बने हुए समस्त अविद्याजनित कु संस्कारों को नष्ट कर दो, उन्हें जला दो। इन अरातियों-शत्रुओं का पूर्णतः नाश कर दो जब तक ये कु संस्कार अन्तःकरण में रहेंगे तब तक हमारे जीवन में कृपणता, स्वार्थभावना, ईर्ष्या, द्वेष, आलस्य-प्रमाद, अभिमान, झूठ, छल-कपट, हिंसा आदि व्यवहार चलते रहेंगे। इसलिए हमारी तो यही प्रार्थना है कि इन समस्त अरातिभावों को नष्ट कर दो, इन्हें दग्धबीजभाव अवस्था में पहुंचा दो। इसी अरातिभाव=दान न देने= त्याग न करने की प्रवृत्ति ने हमें अत्यन्त स्वार्थी, कृपण, कंजूस बना दिया है। हमारे चारों तरफ लोग भूखें, नंगे, रोगी, अज्ञान, अन्यायग्रस्त होकर दुःखी हो रहे हैं। हे देव! हमारे अन्तःकरण में ऐसी उदात्त भावनाएं भर दो कि अपने आसपास भूखें, नंगे, निर्धन, रोगी, असहाय, अन्याय, अज्ञानग्रस्त लोगों को देखकर हमारा हृदय पिघल जाये। हम अपने धन, सम्पत्ति, साधन, सामर्थ्य, ज्ञान, बल, शक्ति, अधिकार, समय, पद-प्रतिष्ठा के साथ इनके कल्याण के लिए त्याग करें, पुरुषार्थ करें। इन सबको अपने समान ही स्वस्थ, सम्पन्न, सुशिक्षित सदाचारी, सुखी बना लेवें, ऐसी प्रेरणा हमारे हृदयों में भरो।

हे देव! हमारे इन स्वार्थ, कृपणतारूपी आन्तरिक शत्रुओं को आप नष्ट कर देंगे तो हम पवित्र बनकर आपके आदेशों को पालन करते हुए न केवल अपने जीवन को उत्तम बना लेंगे अपितु समाज, राष्ट्र, विश्व के जीवन को भी उत्कृष्ट बना ही लेंगे, इसमें कोई संशय नहीं है।

महर्षि दयानन्द की जय।
वैदिक धर्म की जय।।

वेद सर्वमान्य धर्मग्रन्थ है

लेखक- मनमोहन कु० आर्य, देहरादून

वेद ईश्वर से आविर्भूत हैं। इस मान्यता को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने युगान्तकारी ग्रन्थ ''सत्यार्थ प्रकाश'' में तर्क व प्रमाणों से सिद्ध किया है। इसमें वह पूर्णतः सफल हुए हैं। इसी क्रम में हमारा यह कहना है कि वेद सर्वमान्य धर्मग्रन्थ हैं। हमारा यह कहने का तात्पर्य है कि वेद में जो ज्ञान, शिक्षा व मान्यताएं हैं, उन्हें संसार के सभी ज्ञानी, सज्जन एवं निष्पक्ष मनुष्य स्वीकार करते हैं। हो सकता है कि हमारी इस बात से, अन्य मतों की बात तो क्या, आर्य समाज के भी कुछ बुद्धिजीवी सहमत न हों और कहें कि पौराणिक और अन्य-अन्य मत के लोग वेद को मानते ही नहीं हैं फिर वेद सर्वमान्य कैसे हो गए? इस पर हमारा कहना है कि किसी बात को मानना या न मानना कोई अर्थ नहीं रखता। अर्थ तब रखता जब किसी बात व सिद्धान्त को मानने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वेद का सही तात्पर्य, उसकी मान्यतायें, सिद्धान्त व भाव क्या हैं? जब वेदों को न मानने वालों को वेदों का ज्ञान ही नहीं है तो उन अ-ज्ञानियों का न मानने का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। हम अपने सीमित ज्ञान व विवेक के आधार पर कह सकते हैं कि वेदों का विरोध करने वालों को वेदों का यथार्थ ज्ञान ही नहीं है। जब जिन्हें वेदों का यथार्थ ज्ञान हो जाता है तब वह वेदों को स्वीकार कर लेता है और तब उसे अपने व दूसरों के मतों की अच्छाईयां व बुराईयां, कमियां और खामियां स्पष्ट दिखाई देती हैं। उन कमियों को वह वेद से और सृष्टि में घट रहे उदाहरणों से मिलाकर सत्य को जानकर उन्हें ग्रहण करता है और पाता है कि वेद सत्यज्ञान के भण्डार हैं। जो लोग वेद को ईश्वर से उत्पन्न एवं सत्य ज्ञान व धर्मग्रन्थ नहीं मानते हैं उनकी कोटि ऐसी है जैसे कोई कहे कि सूर्य है ही नहीं। चन्द्र है ही नहीं, वह स्वयं के व दूसरों के अस्तित्व से भी इन्कार करे अर्थात् वह ज्ञानान्ध या नेत्रान्ध सिद्ध होते हैं।

यहां हम एक बात पर विचार करना उचित समझते हैं कि संसार का प्रत्येक मनुष्य अल्पज्ञ है। अल्पज्ञ का अर्थ है कि मनुष्य का जीवात्मा एकदेशी है, अतः वह कितना ही अध्ययन कर ले उसका ज्ञान परिमित व सीमित ही रहता है। वह अल्प सामर्थ्य वाला होने से पूर्ण ज्ञानी अर्थात् सर्वज्ञ हो ही नहीं सकता। हां, वह विद्वानों को संगीत, स्वाध्याय-अध्ययन, चिन्तन, मनन अर्थात् योगाभ्यास आदि साधनों से अपना ज्ञान बढ़ा सकता है। स्वाध्याय एक बहुत ही प्यारा और अच्छा शब्द है।

स्वाध्याय के कई अर्थ हैं जिनमें से एक है कि दूसरे विद्वानों, मनुष्यों, ऋषियों-मुनियों व अनुभवियों के ग्रन्थों को पढ़ना व समझना। दूसरे लोग, विद्वान आदि जो पूर्व हो चुके हैं, उन्होंने अपने समय के ग्रन्थों को पढ़ा होता है, उन पर चिन्तन-मनन आदि किया होता है और इस प्रकार उनका जो अनुभव होता है। उन ग्रन्थों को पढ़कर अपने विवेक से हमें यह देखना होता है कि क्या वह सारा ज्ञान सत्य है। कहीं कोई असत्य, अपूर्ण व मिथ्या बात, उस ग्रन्थ के लेखक की अल्पज्ञता आदि के कारण, तो उसमें समाविष्ट नहीं हो गई? उसके साथ-साथ अनेक विद्वानों के ग्रन्थों को पढ़कर और बहुश्रुत होकर हमें अपना मत स्थिर करना होता है तब हम यह कह सकते हैं कि हम सत्य के कुछ निकट हैं। पूर्ण सत्य की कसौटी क्या है, इस पर यदि विचार करते हैं तो यह समझ में आता है कि वह ज्ञान जो हमने प्राप्त किया है, वह निर्भ्रान्त हो, हम दूसरों को समझा सकें व मनवा सकें और उसे तर्क व प्रमाणों से सत्य सिद्ध कर सकें और वह व्यवहार में व प्रकृति में वैसा ही घट रहा हो। इस पर भी हमें उस विषय की सभी आलोचनाओं व प्रत्यालोचनाओं को सूक्ष्मता से देखना होता है कि कहीं हमें अपने सिद्धान्त में कुछ परिवर्तन या संशोधन करने की आवश्यकता तो नहीं है। और यदि हो तो संशोधन करना होता है अन्यथा भविष्य में वह सिद्धान्त व मान्यता पिट जाएगी। वैज्ञानिक लोग इसी प्रकार से अन्वेषण कर नए सिद्धांत स्थिर करते हैं जिनसे नए-नए अविष्कार होकर उपयोगी पदार्थ, उपकरण व साधन सुलभ होते हैं। सत्य की कसौटी में ज्ञान के निर्भ्रान्त होने के साथ एक बात और जुड़ी है जिसका ध्यान हमें रखना है कि हमारा ज्ञान पूर्णतः सृष्टिक्रम के अनुकूल हो। सृष्टिक्रम के अनुकूल जो ज्ञान नहीं है वह अवश्य ही त्रुटिपूर्ण व अशुद्ध है और उस पर बार-बार चिन्तन करके उसे ठीक कर लेना चाहिए। इस पृष्ठभूमि में जब हम मत-मतान्तरों व मजहबों को देखते हैं तो पाते हैं कि प्रायः सभी इस सिद्धान्त का पालन नहीं कर रहे हैं अतः वहां आलोचनीय अनेक बातें, मान्यतायें एवं सिद्धांत है जो समालोचना न होने व देश, काल व परिस्थिति के अनुरूप संशोधित न होने के कारण सदैव बने रहेंगे और उससे जो लाभ मानव जाति को होना था, वह हो पाएगा। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश एवं अपने वार्तालापों व शास्त्रार्थ आदि में इनका उल्लेख कर दिग्दर्शन कराया है और वैदिक धर्म व आर्य समाज को ऐसा रूप दिया है जिसमें यह खामियां नहीं है और हम यह अनुमान करते हैं कि यही भविष्य में मानव मात्र का धर्म होगा।

एक दो शताब्दी पूर्व कुछ पश्चिमी विद्वान हुए जिन्होंने संस्कृत व अध्ययन किया और वेदों पर भी विचार किया। यह विद्वान ईसाई मत के

अनुयायी थे और स्वाभाविक रूप से पूर्वग्राही भी थे। जब उन्होंने वेदों को देखा तो वह वेदों की शब्द रचना, भावों की गम्भीरता व एक-एक शब्द के अनेकानेक अर्थों को देखकर दंग रह गए। महर्षि दयानन्द ने तो एक मन्त्र के अनेक अर्थों को करके बड़े-बड़े पण्डितों को भी आश्चर्य में डाल दिया, अस्तु। कुछ बातों जिनका विरोध नहीं हो सकता था उनको उन्हें मानना ही पड़ा। उदाहरणार्थ वेद विश्व के इतिहास में सबसे पुरानी पुस्तक है, यह सिद्ध तथ्य है जिसे यह लोग चाह कर भी झुठला नहीं सके। वेदों को समझने के लिए आर्ष व्याकरण जो कि पाणिनी की अष्टाध्यायी व महाभाष्य पद्धति पर आधारित है, उससे यह लोग परिचित नहीं थे। महर्षि यास्ककृत निरुक्त भी एक कमाल का ग्रन्थ है जिसका पर्याय व इनके समान ग्रन्थ विश्व की किसी भाषा में उपलब्ध नहीं है। इसकी भी इन्होंने जाने-अनजाने अनदेखी व उपेक्षा की। यह लोग लौकिक संस्कृत पढ़कर वेदों पर कार्य करने लगे। इनका सौभाग्य था कि इन्हें सायण का वेद भाष्य मिल गया। यह सायण मध्यकाल में हुए थे। उस समय वैदिक ज्ञान पराभव को प्राप्त हो चुका था। प्राचीन काल व वैदिक युग में जो यज्ञ-अग्निहोत्र होते थे उनका स्वरूप बदल चुका था। अब वे पहले की तरह पूर्णतः अहिंसा का पालन नहीं करते थे। वाममार्गियों ने यज्ञों में पशु हिंसा का प्रचलन कर दिया था एवं वेदों के सत्यार्थ सुलभ नहीं थे ऐसे समय में सायण वेद भाष्य के कार्य में प्रवृत हुए। साक्षात्कृतधर्मा ऋषि-मुनि एवं विद्वान उन्हें उपलब्ध नहीं हुए। देश, काल व परिस्थिति के अनुसार उनका चिन्तन-मनन हुआ। उन्होंने स्वीकार किया कि चारों वेदों का मुख्य अभिप्राय व उद्देश्य यज्ञ अग्निहोत्रों के करने कराने में ही है और उन्होंने चारों वेदों के यज्ञ-परक अर्थ किए। जहां यज्ञ परक अर्थ नहीं होते थे वहां उन्होंने खींचतान करके काम चलाया। सायण कोई योगी भी नहीं थे, वह एक राजा के मंत्री थे। मंत्री को राजकार्यो से फुरसत ही कहां मिलती है? फिर भी अपने शिष्यों व समकालीन विद्वानों के सहयोग से उनकी जो योग्यता थी व अपना मत था उसके अनुरूप कार्य किया व कराया। उन्होंने ईश्वरीय ज्ञान वेदों के जो अवैज्ञानिक, अपूर्ण, प्रकरण एवं देवता अथवा विषय का ध्यान न रखकर जो मनमाने अर्थ किए उससे उनका गौरव तो नही बढ़ा अपितु इसके विपरीत वैदिक धर्म व संस्कृति का सार्वत्रिक पतन हुआ। हमें प्रतीत होता है कि सायण मेधावी व ज्ञानी नहीं अपितु सत्य ज्ञान व विवेक के नेत्रों से हीन थे अन्यथा वह वेदों के मात्र यज्ञीय और वह भी युक्ति व सृष्टि क्रम के विपरीत अर्थ न करते व यज्ञों में पशु हिंसा का समर्थन कदापि न करते। जो भी हो उनका कार्य वेदों को गौरव प्रदान नहीं

करता और आगे चलकर इसका गौरव महर्षि दयानन्द को प्राप्त हुआ। महर्षि दयानन्द सन् 1842 में सत्य की खोज में घर से निकले थे। सत्यान्वेषण व सत्याग्रह उनके जीवन का उद्देश्य था। उन्होंने देश भर में जहां-जहां भी कोई वेद आदि शास्त्रों के विद्वान वा योगी हो सकते थे, वहां जा-जा कर उनसे सम्पर्क किया और जो विद्या व ज्ञान उनसे मिल सकता था, उसे प्राप्त किया। सौभाग्य से उस युग में मथुरा नगरी में गुरू विरजानन्द ने संस्कृत पाठशाला खोली हुई थी जहां वह विद्यार्थियों को संस्कृत अध्ययन कराया करते थे। ऐसा लगता है कि उन्हें एक सच्चे विद्यार्थी की तलाश व प्रतीक्षा थी जो वहां आकर उनसे व्याकरण व वेद विद्या के सत्य रहस्यों को जाने। प्रज्ञा चक्षु होने के कारण उनका सारा ध्यान व्याकरण, ईश्वर विश्वास, सत्य निष्ठा व विवेक के कारण वह वेद मन्त्रों के रहस्यों के जानने वाले अद्वितीय विद्वान बने और वह समस्त ज्ञान महर्षि दयानन्द को दे सके क्योंकि वह उस ज्ञान को ग्रहण व धारण करने के सर्वथा पात्र थे। हम यहां पर यह भी कहना चाहेंगे कि यदि स्वामी विरजानन्द न हुए होते तो अष्टाध्यायी महाभाष्य व्याकरण पद्धति का उद्धार न होता। तब स्वामी दयानन्द महर्षि दयानन्द न बनते और देश व संसार जो आध्यात्मिक रूप से अन्धकार में डूबा हुआ था। वह डूबा ही रहता। अष्टाध्यायी महाभाष्य पद्धति का उद्धार संसार के स्वामी सर्वेश्वर और सृष्टिकर्त्ता की महती कृपा है जिससे महर्षि दयानन्द वेदों के सत्य अर्थों को कर सके और भावी विद्वानों को करने की सही दिशा व साधन उपलब्ध करा सके। शायद वह अर्थात् ईश्वर वैदिक धर्म व संस्कृति का इससे और अधिक पतन देख नहीं सकते थे।

महर्षि दयानन्द ने वेदों का जो स्वरूप प्रस्तुत किया वह युगान्तरकारी था। बहुत से लोगों के तो वह गले ही नहीं उतरा। इसे यदि उदाहरण से समझना हो तो यह कहना पड़ेगा कि यदि किसी धनवान व्यक्ति का सारा धन लूट लिया जाए तो उसकी जो अवस्था होती है, वह वेदानुयायी सनातन धर्मी हिन्दू कहलवाने वाली जनता की थी। वेदों के विलुप्त होने से अज्ञानान्धकार फैल गया, अन्धविश्वास, कुरीतियां, मिथ्या मान्यताएं, पाखण्ड बढ़ा व हम गुलाम हो गए और नानाविध दुःख पाकर नरक भोग रहे थे। अनायास उस धन की जहाँ लुटेरों ने छुपा रखा हो, वहां किसी भद्रजन की पहुंच हो जाए और वह सारा धन लाकर उस लुटे हुए पूर्व धनवान व्यक्ति के सामने रख दे तो वह व्यक्ति उसे पाकर जिस प्रकार आश्चर्यान्वित एवं खुशी होगा उसी प्रकार भद्रपुरूष के रूप में महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदत्त वेद ज्ञान के यथार्थ स्वरूप को देखकर ऋषियों की सन्तानें विश्वास ही नहीं कर पाई कि यह

उनका वही लूटा हुआ धन था। तथापि कुछ विवेकी जनों ने महर्षि दयानन्द के द्वारा उद्घाटित वेद रहस्यों एवं तथ्यों पर विचार किया और उन्हें लगा कि उनके द्वारा प्रस्तुत विचारों, मान्यताओं व सिद्धान्तों में सच्चाई है। उन्होंने न केवल उसे अपनाया अपितु उसके प्रचार को ही अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया। इससे लाभ यह हुआ कि धीरे-धीरे लोग वेद की सच्चाईयों को मानने लगे और पुराणों के मानने वाले तथा अन्धविश्वासों व कुरीतियों से ग्रसित लोगों ने भी धीरे-धीरे वैदिक यथार्थ ज्ञान को समझना आरम्भ किया। स्थिति में सुधार होता गया। सन् 1883 ई. में महर्षि दयानन्द संसार से विदा ले गए और उनके अनुयायी डटे रहे, कार्य करते रहे, लोगों पर उसका असर होता गया। स्थिति यह बन गई कि पुराणियों ने भी अपने पुराणों की युक्तिहीन बातों को छोड़ दिया परन्तु मोह, अज्ञानता पूजक को देखें तो उसे किसी एक देवता या मूर्ति पर विश्वास ही नहीं है। अनेक मन्दिरों में भी यदा-कदा वह जाता रहता है। वहां भी अनेक देवी-देवताओं की प्रस्तर प्रतिमायें व चित्र आदि होते हैं। फिर समय-समय पर गंगा स्नान व अन्य अनुष्ठान आदि भी करता-कराता रहता है। अनेक देवी-देवताओं व तथाकथित देवमूर्तियों की पूजा अर्चना करने व प्रार्थना करने, कि उसे व उसके परिवार के सदस्यों को भी कोई दुःख न हो, पर देखा जाता है कि ऐसे लोगों के जीवन में सामान्यरूप से होने वाली समस्याएं व दुःख आदि अन्यों की भांति, जो भिन्न रीति से पूजा पाठ करते हैं, होते ही रहते हैं जिनसे उसे भारी क्लेश होता है। हमारा यह भी अनुभव है कि एक निर्धन, अंपढ़ व अल्पशिक्षित तथा सामान्य जीवन यापन करने वाला व्यक्ति पढ़े लिखे शिक्षित तथा आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व समृद्ध व्यक्ति की तुलना में अधिक धार्मिक व अच्छे आचरण वाला होता है परन्तु देखा यह जाता है कि निर्धन व्यक्ति धनवान, चाहे उसका वह धन कदाचार आदि से ही प्राप्त होता है, अधिक सुखी होता है। इन दुःखों के कारण क्या हैं, इनका समाधान वैदिक मत से हो जाता है। धनी व्यक्ति का अधिक मात्रा में विषयजनित सुखों के सेवन का परिणाम दुःख होता है। सभी पहलुओं पर विचार करने पर हमें लगता है कि महर्षि दयानन्द के सिद्धान्त व मान्यताएं पूर्णतः सत्य पर आधारित है। इनका आचरण अर्थात् वेदाचरण क्यों न हो, वह अपने भावी दिनों को वैदिक मत का पालन कर सुदिन में बदल सकता है। ऐसा इस लिए होगा या होता है क्योंकि वेदों का ज्ञान सत्य है और सत्य का आचरण ही मनुष्य के इस जीवन एवं इसके बाद के नए जीवन को भी सुखदायी बनाता है।

अब हम संक्षेप में वेद विरोधियों के आक्षेपों व आलोचनाओं पर विचार करते हैं। वेद

के विरोधियों की आलोचनाओं का प्रमुख कारण उनकी वेद के सत्य स्वरूप के प्रति अनभिज्ञता है। दूसरा कारण उनकी अविद्या, स्वार्थ, हठ व स्वमत का दुराग्रह हुआ करता है। आज का युग तुलनात्मक अध्ययन कर सत्य के ग्रहण व असत्य के त्याग करने का है। महर्षि दयानन्द ने भी सभी मतों के बन्धुओं को आमंत्रित किया था कि वे वेद की मान्यताओं एवं सिद्धान्तों के सत्य को स्वीकार करें। लेकिन अनुभव ने यह सिद्ध किया है कि आज भी सत्य को किसी से मनवाना सरल कार्य नहीं है अपितु अति दुष्कर कार्य है। यदि प्रचार किया जाए तो इसका असर तो पड़ता है परन्तु सफलता पुरुषार्थ के अनुरूप ही होती है। दूसरी ओर नाना मत मतान्तर के लोग अधिक पुरुषार्थ कर बाजी मार ले जाते हैं और भोली, अज्ञानी व अविवेकी जनता उनके प्रलोभनों में फंस जाती है। आर्य समाज विगत अनेक वर्षों से अनेक आन्तरिक समस्याओं से ग्रसित है जिसने आर्य समाज में जड़ता उत्पन्न कर दी है। अतः वेदों का प्रचार कार्य मन्द हो गया है। हमें प्रचार के आधुनिक व प्रभावशाली नए तरीकों को भी अपनाना पड़ेगा। हमें यह देखना है कि कहीं दिये तले अन्धेरा तो नहीं है। हमें आशा है कि जिस प्रकार परमात्मा द्वारा निर्मित सूर्य तिमिर का नाश करता है उसी प्रकार वेद रूपी सूर्य भी अज्ञान रूपी तिमिर व मत-मतान्तरों की मिथ्या मान्यताओं एवं परम्पराओं को अवश्य ही विनष्ट करेगा जिस प्रकार कि महाभारत काल के पश्चात् महर्षि दयानन्द के आविर्भाव से हुआ है।

आज किसी मत-मतान्तर व मजहब की ओर से वेद, महर्षि दयानन्द की वेद विषयक मान्यताओं, सिद्धान्तों एवं वेदार्थों को चुनौती नहीं मिल रही है और न किसी प्रकार की कहीं कोई सारयुक्त आलोचना है। सत्य के निर्णयार्थ शास्त्रार्थ की चुनौती भी कहीं से नहीं है। कारण है कि वेदेतर मतों के अनुयायियों के मत सीसे के भवन या शीश महल के समान हैं। वह वेद के दुर्ग पर पत्थर मारें या हमला करें, तो कैसे करें? अतीत में उन्होंने जो कुछ किया है, उसका परिणाम वह देख चुके हैं कि उन्हें चारों खाने चित होना पड़ा। हम इसे वेद, महर्षि दयानन्द एवं आर्य समाज की दिग्विजय मानते हैं। इससे वेद सर्वमान्य हैं, यह निष्कर्ष स्वमेव निकलता है। हम यह कहना चाहते हैं कि वेदों में ही संसार का एकमात्र सर्वमान्य धर्म ग्रन्थ होने की पूर्ण शक्ति व सामर्थ्य है। आवश्यकता केवल इसके अनुयायियों द्वारा इसका ठीक प्रकार से अध्ययन व प्रचार करने की है। हम सभी आर्यों का आह्वान करते हैं कि वह नित्य प्रति स्वाध्याय कर अपने आस पास के वातावरण में वेदों का नाद गुंजायमान कर दें जैसा कि अग्निहोत्र यज्ञ के बाद सर्वत्र वायु का वातावरण सुगान्धित हो जाता है और व्यक्ति प्रसन्नता एवं सुख अनुभव करता है। परिणाम अनुकूल होंगे यह निश्चित है।

योग द्वारा ही वर्तमान समस्याओं का समाधान सम्भव है।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार, नई दिल्ली

योग एक मानस शास्त्र है जिसमें मन को संयत करना और पाशविक वृत्तियों से हटना सिखाया जाता है। वर्तमान समस्याओं के स्र्वाङीण विनाश के लिए योग बहुत उपयोगी है, मानव जीवन के लिए आवश्यक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आत्मिक विकास में यह विद्या सफलता दिलाती है।

वर्तमान समय में योग का पर्याप्त प्रचार हो रहा है, किन्तु यह प्रचार केवल दो रूपों में दृष्टिगोचर हो रहा है। या तो ध्यान, जिसे आज के प्रगतिशील समाज में मेडिटेशन नाम दिया गया है, के नाम पर कुछ देर आंखे बन्द करके बैठ जाते हैं, या योगा के नाम पर विविध प्रकार के आसन करके सन्तुष्ट हो लिया जाता है कि हम योग कर रहे हैं। शहरी जीवन में आपको इन दोनों क्रियाओं को करने वाले ऐसे अनेक सज्जन मिल जायेंगे, जो गर्व से कहते मिलेंगे कि मैं योगा की क्लास में गया था, या प्रातःकाल नियमित योगा (योगासन) करता हूँ। इसी प्रकार Meditation के द्वारा सन्तुष्ट हो जाने वाले अनेक जन भी अपने को योगाभ्यासी करने का भ्रम पाल लेते हैं।

ये दोनों ही क्रियाएं योग नहीं हैं। यह भी कह सकते है कि पातंजल योग दर्शन से इनका सम्बन्ध नहीं है। जहाँ तक Meditation का प्रश्न है, वह स्वल्पांश में योग की धारणा का स्वरूप तो है, तथापि विशुद्ध रूप में धारणा भी नहीं है, अपितु विचारों का केन्द्रीकरण है। ऐसा केन्द्रीकरण तो गम्भीर कार्य करते हुए सभी को कराना पड़ता है। गाड़ी चलाते हुए ड्राइवर, आप्रेशन करते हुए डॉक्टर, शोध करते हुए वैज्ञानिक, अध्यापन करते हुए अध्यापक इत्यादि अनेक व्यक्ति पूर्ण दत्तचित्त होकर ही अपने कार्य को करते हैं। दो बांसो के बीच में बन्धी हुई लम्बी रस्सी पर चलने वाला नट, तीव्र गति से मौत के कुँए में मोटर साइकिल चलाने वाला व्यक्ति तो इनसे भी अधिक ध्यानमग्न होकर अपना कार्य करते हैं, तथापि उन्हें कोई योगी नहीं कहता, क्योंकि उनका ध्यान योग से सम्बन्धित नहीं, अपितु अपने कार्य से सम्बन्धित है। पतञ्जलि ने तो योग की सुस्पष्ट परिभाषा दे दी है-

'योगश्चित्तवृत्तिनिरोध :'। सभी प्रकार की चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग हैं। यहां यह समझ लेना बहुत आवश्यक है कि पतञ्जलि का यह चित्तवृति निरोध किसी समय विशेष के लिये नहीं है, अपित 24 घण्टे जीने वाले जीवन के लिए है। इस पर बाद में विचार करेंगे, पहले आसनों के विषय में भी कुछ कहना अनिवार्य है। आजकल योग/योगा के नाम जिन आसनों की क्लासें लगायी जाती हैं, वह परम उपयोगी हैं। लेखक का उनसे कोई विरोध नहीं, किन्तु

आसन शारीरिक स्वास्थ्य तथा रोगमुक्ति तक ही सीमित हैं। यह भी बहुत बड़ी उपलब्धि है। वर्तमान समय में अनियन्त्रित भोग-विलास में लिप्त होने वाले, अनाप-शनाप खाने वाले जन नाना रोगों से ग्रस्त रहते ही हैं। ये रोग ऐसे दु:साध्य भी होते हैं, जिन्हें डॉक्टर/अस्पताल भी ठीक नहीं कर पाते। योगासनों के द्वारा ऐसे अनेक व्यक्ति रोगमुक्त होते देखे गये हैं। यह योगासनों की बहुत बड़ी उपलब्धि है, तथा यह जनसाधारण को चाहिए। उसके लिए यही सब कुछ है। इसलिए वह इनसे आगे जाने का यत्न ही नहीं करता। न करे, किन्तु इन्हें योग मानने का भ्रम उसे नहीं पालना चाहिए। पतंजलि ने योगदर्शन में इस प्रकार के आसनों का विधान नहीं किया। उसके अनुसार तो आसन वही है, जिसमें सुखपूर्वक लम्बे समय तक धारणा, ध्यान में बैठा जा सके। क्या पंतजलि को अनेक प्रकार के आसनों का ज्ञान नहीं था। अवश्य होगा, किन्तु वे उन्हें ध्यान में सहायक या आवश्यक नहीं मान रहे हैं। इसलिए योगदर्शन में उनको स्थान नहीं दिया। रही बात रोग मुक्ति की। इसके लिए पतञ्जलि दूसरा उपाय सुझाते हैं- ईश्वरप्रणिधान। इसकी व्याख्या में व्यास जी लिखते हैं कि ईश्वर प्रणिधानी को व्याधि आदि दु:ख नहीं सताते। इसके साथ ही पतञ्जलि द्वारा प्रतिपादित यम-नियम-प्राणायाम-प्रत्याहार का पालन करने वाला साधक या तो रोगी होगा ही नहीं, होगा भी तो बहुत कम। क्योंकि 'भोगे रोगभयम्' यह संसार भोगी है, तभी तो रोगों में ग्रस्त है। योगी रोगी में ग्रस्त होगा ही नहीं। इसीलिए पतञ्जलि को विस्तार से योगासनों के उल्लेख की आवश्यकता नहीं पड़ी।

योग इतना सस्ता नहीं है जितना कि उसे आज बना दिया गया है। पतञ्जलि का योग एक समग्र जीवन पद्धति है। वह किसी एक भाग की साधना का नाम नहीं, अपितु योग के आठों अंगों की समग्र साधना का नाम है। इसलिए वह केवल किसी काल विशेष या स्थान विशेष में की जाने वाली क्रियाएं नहीं हैं, अपितु चौबीसों घण्टे जीवन से सम्बन्धित एक सुव्यवस्थित पद्धति है कि जिससे मानव जीवन पूर्णत: नियन्त्रित एंव परिमार्जित हो जाता है।

योग के द्वारा न केवल व्यक्ति का, अपितु पूरे समाज एवं राष्ट्र का जीवन परिमार्जित हो सकता है, शुद्ध हो सकता है। योग से वर्तमान समस्याओं का समाधान कैसे सम्भव है, इस पर भी विचार करते हैं-

योग का प्रारम्भ आसनों अथवा ध्यान से नहीं होता, अपितु यम-नियमों से होता है। लेखक की सुदृढ़ मान्यता है कि यम-नियमों के पालन बिना योग में प्रवेश हो ही नहीं सकता। पतञ्जलि द्वारा विहित यम-नियमों के प्रयोजनों को संक्षेप में इस प्रकार कहा जा सकता है-?

(क) दुष्कर्मों के निवारणार्थ - अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य इन चारों का यही प्रयोजन है।

(ख) सांसारिक पदार्थों से विरक्ति - अपरिग्रह का फल।

(ग) चित के मलों का क्षालन - आन्तरिक शौच तथा तप द्वारा।

(घ) एकाग्रता एवं समाधि में सहायता - आन्तरिक शौच तथा स्वाध्याय से चित की एकाग्रता प्राप्त होती है। इससे ही इन्द्रियों पर जय प्राप्त होती है, जो कि योगी के लिए परम आवश्यक है। इन्द्रियलोलुप व्यक्ति योग कर ही नहीं सकता।

(ङ) ईश्वर प्रणिधान समाधि की सिद्धि में साक्षात् कारण बनता है। इस प्रकार सभी यम-नियम योगाभ्यासी के लिए आवश्यक है।

प्रश्न है, योग से वर्तमान समस्याओं का समाधान कैसे होगा ? होगा, आज का मानव शीघ्रता से भोगवाद की ओर न केवल भाग रहा है, अपितु उसमें आकण्ठ धंसा हुआ है। आज का अध्यात्म भी भोगवाद की भोगवाद से अछूते नहीं हैं। उनके पास वे सभी साधन सभी सुख-सुविधाएं विद्यमान हैं, जो सभी सांसरिक व्यक्तियों को उपलब्ध भी नहीं हैं। धन एवं यश की तृष्णा उनके मन में गहराई तक छायी रहती है। जब सन्तों, महन्तों की यह दशा है तो सामान्य सांसारिक जनों की क्या स्थिति होगी? योगदर्शन इसी तृष्णा पर कुठाराघात करता है। वह उसे पूर्णतः नष्ट करता है। इसलिए पतञ्जलि ने 'सन्तोष' नामक नियम बताया तथा इसका फल भी बतला दिया- **सन्तोषादनुत्तमं मुखलाभः।** अर्थात् सन्तोष से ही अलौकिक सुख मिलता है तृष्णाक्षय के सम्बन्ध में व्यास जी ने एक श्लोक उपस्थित किया है -

यच्च कामसुखं लोके यच्च दिवं महत्सुखम्।
तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हतः षोडशीं कलाम्॥

अर्थात् संसार के दिव्य सुख भी तृष्णाक्षय रूपी सुख के 1/16 भाग के बराबर भी नहीं है। यदि समाज इस श्लोक को हृदयङ्गम करता है, तो उसके बहुत से कष्ट मिट जायेंगे। तृष्णा के वशीभूत होकर ही हम वस्तुओं का अनाप-शनाप अनावश्यक संग्रह किये जाते हैं। चैन्नई की मुख्यमंत्री जयललिता का उदाहरण सुप्रसिद्ध है कि उसके पास इतनी साड़ियां निकली कि वर्ष में प्रत्येक को एक बाद भी धारण करने का अवसर नहीं आता। अन्य सम्पत्ति का विवरण तो अलग है, जो सर्वविदित है। अकेली जयललिता ही नहीं, राजनीतिक के लोग इसी धर्म का निर्वाह कर रहे हैं। राजनीति में तो दोनों हाथों से सम्पत्ति बटोरने की पूरी छूट है ही। आज समान्य जनता भी इसी दौड़ में शामिल हो रही है। परिणाम क्या है? दुःख, छीनाझपटी, बेईमानी, रिश्वत इत्यादि। यदि इन लोगों ने पतञ्जलि के नियम 'अपरिग्रह' का पाठ पढ़ा होता तो यह दुर्दशा न होती।

आज सर्वत्र आतंकवाद, हत्याएं, मारकाट का साम्राज्य है। इसमें अन्य कारणों के सिवाय एक कारण यह भी है कि अंडे तथा मांस भक्षण के द्वारा हिंसावृत्ति हमारे रूधिर में प्रवेश कर गयी है। अपने सुख के लिए प्राणी के प्राण लेने में आज का मानव संकोच नहीं करता। इस वृत्ति पर पतञ्जलि के 'अहिंसा' नामक यम द्वारा ही नियन्त्रण लगाया जा सकता है। दण्ड के भय या

अन्य कारण से हिंसावृत्ति दूर होने वाली नहीं। भारत आज अपनी जनसंख्या वृद्धि से भयभीत है। इसलिए परिवार नियोजन पर पता नहीं, राष्ट्र का कितना धन बर्बाद किया जा रहा है। परिवार वृद्धि के मूल में जो काम वासना है, उस पर नियन्त्रण लगाने का कोई यत्न नहीं किया जा रहा, उल्टे, विषय भोग को बढ़ावा देने वाले नाना साधन सरकार तथा डाक्टरों की ओर से सुझाए जा रहे हैं। यदि पतञ्जलि के 'ब्रह्मचर्य' नामक यम का इतनी तत्परता से प्रचार-प्रसार किया गया होता तो तब राष्ट्र तथा राष्ट्रवासियों का चरित्र कुछ और ही होता। तब अपहरण नहीं होते। तब बलात्कार नहीं होते। ब्रह्मचर्य ही सबको नियन्त्रित कर देता। ऐसा करे कौन? वेद में कहा है- **ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।** अर्थात् ब्रह्मचर्य तथा तप के द्वारा ही राजा राष्ट्र की रक्षा करता है। आज तो बिल क्लिंटन जैसे राष्ट्रपति भी विद्यमान हैं, जिनकी दुश्चरित्रता समस्त संसार में सुप्रसिद्ध होने पर भी उनके गौरव में कमी नहीं आयी। भारत में भी यह विचार तीव्रता से घर करता जा रहा है। कि चरित्र का राजनीति से कोई समबन्ध नहीं। पतञ्जलि ब्रह्मचर्य के द्वारा समाज के दुराचारी व्यक्तियों को ही नियन्त्रित कर रहे हैं। योगी तो ब्रह्मचारी होता ही है। इतना ही नहीं, व्यास जी तो यह भी लिखते हैं कि उपस्थेन्द्रिय के समान अन्य लोलुप इन्द्रियों को भी विषयों से रोकने का नाम ब्रह्मचर्य है। यदि ब्रह्मचर्य की इस परिधि को अपना लिया जाए तो व्यक्ति का जीवन पूर्णतः नियन्त्रित हो जाए।

पतञ्जलि ने अस्तेय तथा सत्य का भी विधान किया है। आज समाज ने दोनों को ही परे फेंक दिया। अस्तेय की परिधि विशाल है। किसी के द्रव्य को उसी अनुमति के बिना लेना स्तेय है। अपनी ड्यूटी का पूरे समय ठीक से पालन न करना स्तेय है। पदार्थों में मिलावट कराना स्तेय है। मासिक वेतन के अतिरिक्त दो नम्बर की कमायी करना स्तेय है। झूठे बिल बनाना स्तेय है। यह जानते हुए भी पूरा समाज इस स्तेय (चोरी) में लिप्त है। इसके लिए असत्य का आश्रय लेता है। यदि पतञ्जलि के अस्तेय तथा सत्य का पाठ समाज एवं राष्ट्र ने पढ़ लिया होता तो उसका नैतिक चरित्र पतन की ओर न जाकर उन्नति के शिखर पर पहुँच जाता।

यहां संक्षेप में यही प्रतिपादन किया गया है कि Meditation के नाम पर आँख मीचकर बैठ जाने का तथा योगासन मात्र कर लेने का नाम योग नहीं है, अपितु यह तो समग्र जीवन दर्शन है तथा क्रियात्मक रूप में जीवन को शुद्धता की ओर ले जाकर दुःखरहित करने की वैज्ञानिक पद्धति है। पतञ्जलि के अनुसार योगाभ्यासी व्यक्ति ईश्वर विश्वासी होगा। वह सन्तोषी, तपस्वी, अहिंसक, सत्यवादी, स्वाध्यायशील तथा ब्रह्मचारी होगा। वह इन्द्रियलोलुप नहीं होगा। जब ऐसे व्यक्ति होंगे तो समाज सुधरेगा या नहीं? वर्तमान समस्याएं समाप्त होंगी या नहीं? इसलिए योग को हमें क्रियात्मक रूप में जीवन में अपना लेना चाहिए। तभी समाज का परिशोधन होगा। तभी वर्तमान समस्याओं का समाधान होगा। भोगवादी तथा स्वेच्छाचारी व्यक्ति का योग में प्रवेश नहीं है। ●

विचार शक्ति को बढ़ाइये

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री, नई दिल्ली

हे संसार के लोगों! आप अपनी विचार शक्ति को प्रबल रखिये कभी भी अपने आपको हीन एवं बलहीन न समझें। आपके अन्दर महान शक्ति है।

साठ की उम्र के हो तो भी अपने को बूढ़े मत समझो स्वयं कहो अभी तो मैं युवक हूँ।

जो आदमी अपने को युवावस्था में वृद्ध कहने लगता है। वास्तव में वह वृद्ध हो जाता है। जो व्यक्ति अपने को अधम समझता है। वह अधम हो जाता है।

जैसे सोचोगे, वैसा बन जाओगे। प्रेम, करुणा, दया जब आपके जीवन में होगी, उतने ही तुम परमतत्व को जानने के अधिकारी बन सकोगे।

आज महानगर में रहने वाले व्यक्ति को पूछो। वह प्रायः अपनी ड्राइंगरुम खूब सजाकर रखता है, कालीन साफ होगा, दीवारों पर सुन्दर पेंटिग लगी होगी। क्योंकि बाहर से कोई व्यक्ति आयेगा तब उसे आप अपने ड्राइगरुम में ही बैठयेंगे। वह अतिथि उस रुम को देखकर प्रसन्न हो, उसे अहसास हो कि अब हम कितने सभ्य एवं साफ सुथरे लोग हैं।

परन्तु जहां सोते हैं, जहां भोजन बनता है, खाते, पीते हैं, वहां हम सजाने की बात नहीं सोचते वहां कौन जाके देखेगा, देखेगा तो ड्राइंगरुम को ही देखेगा। ठीक हमारे जीवन के साथ भी यही घटना घटित होती है, हम अपने ड्राइंगरुम रूपी शरीर को ही सजाने में लगे हैं, लेकिन आत्मा को हम सजाना भूल गये। मन को निर्मल करना भूल गये। हृदय में काम क्रोध लोभ मोह, ईर्ष्या रूपी कूड़े को हटाना भूल गये। यही कारण है कि हमारी मानसिक शक्ति कमजोर है।

आप प्रार्थना करते है।

पूजनीय प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये।
छोड़ देवें छल कपट को मानसिक बल दीजिये।।

जब तक छल कपट नहीं छूटेगा, तब मानसिक बल की प्राप्ति नहीं हो सकती।

शरीर से व्यक्ति बलवान् है, परन्तु आत्मिक बल नहीं। तो वह बल किसी काम का नहीं।

एक सुडौल शरीर का धनी व्यक्ति शहर से गांव आ रहा था। सांझ हुई, अंधेरा होने लगा। रास्ते के अगल-बगल में पेड़ लगे हुए थे। एक चिड़िया फुदक कर दूसरे पेड़ पर बैठ गई, वह व्यक्ति अन्दर से खूब डर गया। कहीं भूत तो नहीं, और वही पर धड़ाम से गिर गया। और उसकी मौत हो गयी। मानसिक बल न होने के कारण व्यक्ति भय से मर गया। इसीलिए व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने पुत्र को बाल्यावस्था से ही, वीर, पराक्रमी, दृढ़ संकल्पवान् बनने की प्रेरणा दें।

माताओं की थोड़ी सी भूल से बालक जीवनभर डरपोक एवं भीरु बन जाता है।

जब बच्चा रो रहा होता है, तब माता उस बच्चे को चुप कराने के लिए एक वाक्य कहती है। बेटे चुप हो जाओ, नहीं तो भूत ले जायेगा। भूत का नाम सुनकर चुप हो जाता है, परन्तु वह

जिन्दगी भर डरपोक भीरु एवं कायर बन जाता है। इसलिए माता का धर्म है, वह बच्चों को कहे, बेटे तुम तो वीर पुत्र हो, पराक्रमी हो, डरो मत, रोओ मत ऐसी दिव्य प्रेरणा देनी चाहिए।

कभी-कभी आप देखेंगे कि यदि आप अकेले कहीं जा रहे हो, दो तीन कुत्ते यदि आपको देख लेंगे तो आप पर भौंकना शुरू कर देंगे। आप यदि कुत्ते की भौंकने की आवाज को सुनकर भागने लगेंगे तो वे कुत्ते आपका पीछा करेंगे और आपको काट भी लेंगे।

यदि आप निर्भय होकर खड़े रहोगे फिर धीरे-धीरे चलने लगोगे, तो वे कुत्ते भी शान्त हो जायेंगे।

बाजी हारने को हार नहीं कहते, हिम्मत हारने को हार कहते हैं।

एक गांव में एक लड़की की शादी पक्की हुई। लड़की को पता चला मेरे ससुराल वाले कपड़ा बुनने का काम करते हैं। शाम के समय जब खेत से आ रही थी तब कुछ सहेलियां मिलकर उस लड़की को चिढ़ाने लगी, अरे सुधा, तेरी आदमी तो ठीक है तुम दोनों की खूब अच्छी जोड़ी है। परन्तु तेरा आदमी जुलाहे का काम करता है। जब वहाँ बहू बन के जायेगी तब तुझे भी पांच-पांच बोरी रुई कातनी पड़ेगी। यह बात सुनते ही सुधा मूर्च्छित हो गयी, धीरे-धीरे वह कमजोर होने लगी, खिले हुए चेहरे का रंग फीका पड़ने लग गया, न भूख, न नींद, दिन-रात उसे चिन्ता सताने लगी, अरे मैं वहां जाऊंगी तो जीवनभर मुझे रुई कातनी पड़ेगी। इतना दुष्प्रभाव कमजोर मन में पड़ने लग जाता है। कई डाक्टरों हकीमों से इलाज करवाये परन्तु कोई असर नहीं धीरे-धीरे सूखकर कांटा हो गयी।

उसी गांव में एक विद्वान् की कथा चल रही थी। उन व्यक्तियों ने सोचे चलो वहां ले चलें तथा उस संत के आशीर्वाद से कुछ चमत्कार हो जाये। संत के पास सुधा की माता-पिता ने पहुंचकर अपनी बेटी की समस्या रखी। सारी बात सुनकर उस संत ने सलाह दी। देखो तुम्हारी बेटी को कोई रोग नहीं अपितु मानसिक शक्ति की कमी है।

तुम एक काम करो एक बैलगाड़ी में 25 बोरी रुई लादकर शहर से गांव की ओर ले चलो। फिर कुछ न कुछ समाधान निकल जायेगा, सुधा की सहेलिया को कहा गया तुम सुधा को खेलने के बहाने मैदान में ले आना बैलगाड़ी जब गुजरेगी, तब हम उसमें आग लगा देंगे। ऐसी योजना बनाई गयी, रुई से लदी बैलगाड़ी जा रही थी, उसमें आग लेगा दी गई। दूर सुधा सहेलियों के साथ खेल रही थी। उन कन्याओं ने देखा आग लग गई है। सुधा उठती हुई ज्वाला को देखकर पूछने लगी सहेलियों से, ये आग किस मे लगी है? उन सहेलियों को जैसे सिखाया गया था, वे कहने लगी- अरी सुधा तुम्हें पता नहीं, तुम्हारी जहां ससुराल है, वहां रुई जा रही थी वह सब रुई जल गई। अब तुम्हें रुई नहीं कातनी पड़ेगी। क्योंकि इस कारोबार में बहुत घाटा हो गया है।

अब सुधा खिलखिलाकर हंसने लगी। अब मुझे रुई नहीं कातनी पड़ेगी। अब मुझे कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा। धीरे-धीरे ठीक होने लगी। चेहरे में मुस्कान आ गयी, महीने भर में सुधा सुडौल हो गयी। सबसे बात करने लग गई। यह है मानसिक शक्ति का परिणाम यह मत

समझिये कि केवल वाणी से निकला हुआ शब्द ही दूसरों पर प्रभाव डालता है। मन का विचार भी दूसरों पर प्रभाव डालता है।

हममें से प्रत्येक व्यक्ति के भीतर रिसीवर है, जो विचार को लेता है। एक ट्रांसमिटर भी है जो विचार को बाहर भेजता है – स्वामी विवेकानन्द

मानव में असीम शक्तियां निहित है। यदि उसको जान सके तो मनुष्य पुरुष से पुरुषोत्तम, मानव से महामानव नर से नारायण बन सकता है।

मनुष्य शरीर की दृष्टि से एक साधारण जीव है। उसके पास सिंह जैसा पराक्रम, हाथी जैसा विशाल शरीर गिद्ध जैसी दृष्टि, घोड़े, गधों जैसे भार ढोने की शक्ति नहीं है।

पुनरपि मनुष्य के पास बुद्धि है, जिसके कारण वह सर्वश्रेष्ठ है। शारीरिक बल न होने पर भी बुद्धि कौशल से आसमान में वायुयान से सफल कर रहा है। बुद्धि बल से उसने रेलगाड़ी की रचना की है, क्रेन के माध्यम से लाखों टन माल को मिनटों में उठा ले रहा है।

दूरभाष का आविष्कार कर वह दूर की बात सुनने और दूर तक बात प्रेषित करने की शक्ति रखता है।

जब बालक का जन्म होता है। तब वह रोता हुआ संसार में आता है, माता-पिता उसे चलना, बोलना पढ़ना सिखाते हैं, तब वह सीखता है। परन्तु जानवरों के बछड़े पैदा होते ही दौड़ने लग जाते हैं, गाय, बैल स्वभवत: तैरना जानते हैं। परन्तु मनुष्य सीखे बिना नहीं तैर सकता। फिर भी मनुष्य मस्तिष्क बल से बहुत ऊंचा उठ सकता है, वह चिन्तक, कवि, मनीषी दार्शनिक, बन जाता है। बुद्धि से वह शेर को हाथी को अपने हाथों से नचाता है।

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने को दीन-हीन न समझें जो व्यक्ति अपने सिर को उठाकर रखता है, उसकी मनुष्यता दिखाई देती है, सिर को झुकाने से दीनता प्रकट होती है।

वायु से भी वेगवान मन है।
चंचल मन है विलक्षण वस्तु,
तन्मे मन: शिव संकल्पमस्तु

मनुष्य का अर्थ ही यही है- मत्वा कर्माणि सीव्यति इति मनुष्य: जो सोचकर कार्य करता है वही मनुष्य है।

इच्छाशक्ति को बढ़ाते जाइये,
विल पावर इज नैक्सट टू गॉड पावर।
इच्छाशक्ति के बराबर संसार में कोई ताकत नहीं।

मन की शक्ति अपार है। मन की भावनाओं का प्रभाव बाहर की वस्तुओं पर भी पड़ता है। कछुआ अपने अण्डों का स्वयं पोषण नहीं करता अपितु वह रेत में गाड़कर स्वयं जल में रहकर दूर से ही अण्डे पर आंतरिक प्रभाव डालता है। इसी कारण वे अण्डे बढ़ते हैं। कछुओं को वहां से हटा दिया जाये तो अण्डे निर्जीव हो जायेंगे।

एक प्रकार का सांप होता है वह अपने शिकार के लिए इधर-उधर नहीं जाता, अपितु एक स्थान पर बैठकर मुंह खोलकर भूख की भावना प्रबल करता है। उसके इच्छाशक्ति के परिणाम स्वरूप दूर से कीड़े-मकोड़े उसके पास स्वयं आ जाते हैं।

कायरमन कर एक अधारा
दैव दैव आलसी पुकारा

प्रेरणात्मक एवं अनुकरणीय

सी० ए० राजकुमार, सिरसा हरियाणा

आर्यसमाज की सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक विचारधारा का आज पहले से भी अधिक सार्थकता के साथ प्रचार हो सकता है। मगर यदि हमारे समस्त अधिकारी एवं विद्वान् अपनी समस्त एषणाओं को त्यागकर मिशनरी भावना से प्रचार करें। आर्यसमाज के स्वर्णयुण का कारण यह था कि उस समय हमारे पास पंडित गुरूदत्त, पंडित लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द आदि महर्षि के अनेक दीवानें थे जिन्होंने अपना तन, मन और धन अपने मिशन के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने पुत्रैषणा, वित्तेषणा और लोकेषणा से ऊपर उठकर निष्काम-भाव से कार्य किया। आज भी उसी भावना से कार्य करने की आवश्यकता है। प्रेरणा के रूप में मैं पूज्य महात्मा चैतन्यमुनिजी तथा मां सत्यप्रियायति जी का उदाहरण देना चाहता हूँ जिनमें आज भी वही मिशनरी भावना हमें दिखाई देती है। उनका पूरा जीवन ही मानों देव दयानन्दजी के लिए समर्पित रहा है। हमने उन्हें बहुत ही समीप से देखा-परखा है, वे पूर्णतया एषणारहित, त्यागी, समर्पित, विनम्र, निरअंहकारी और शालीन है। अपनी अद्भुत शैली से वह किसी को भी एक बैठक में वैदिकधर्मी बनाने की क्षमता रखते है। हम लोग पूज्य महात्माजी की कुटिया में बैठे थे तो हमारे आग्रह पर उन्होंने कुछ प्रसंग सुनाए जो उन्होंने अपनी आत्मकथा 'पुल पर जीवन' में भी लिखे है। विभिन्न प्रान्तीय सभाओं द्वारा आर्यसमाज स्थापना दिवस के शताब्दी कार्यक्रम धूमधाम से मनाए जा रहे थे। ऐसा ही एक आयोजन हिमाचल आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से भी शिमला में मनाया गया था। उस समय आचार्य चैतन्यजी सभा के उपमन्त्री थे। उन्होंने शताब्दी समारोह में आने वाले लोगों की आवास व्यवस्था का कार्यभार सौंपा गया था। इस कार्य को उन्होंने कितनी निष्ठा और लगन के साथ किया होगा इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि एक दिन सायंकोल लगभग साढ़े आठ बजे ब्रह्मचारी रामप्रकाश जी ने उनसे पूछा कि आपने रात्रि का भोजन कर लिया कि नहीं? उनके इस प्रश्न पर चैतन्यजी को स्मरण आया कि रात्रिकालीन भोजन की बात तो दूर रही उन्होंने तो प्रात:काल से अब तक कुछ भी मूंह में नहीं डाला है। उन्होंने आर्य समाज सुन्दरनगर तथा वर्षों आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री, वरष्ठि उपप्रधान और कार्यकारी प्रधान के रूप में निष्कामभाव से की गई सेवा के बारे में भी चर्चा की। उन्होंने बहुत ही भावविभोर होकर कहा कि किस प्रकार उन्होंने तथा उनके समूचे परिवार ने सभी के लिए बहुत ही कठिन परिस्थितियों में समर्पित-भाव से कार्य किया है तथा सभा की पत्रिका

'आर्यवन्दना' को अपने बच्चों की तरह पाला था....उन्होंने जम्मू काशमीर के बार्डर क्षेत्र तथा गुजरात, महाराष्ट्र आदि अनेक प्रान्तों में किन कठिन परिस्थियों में वेद-प्रचार किया है, हम सुनकर आश्चर्यचकित से रहे गए....वह अपने आप में अनुमप एवं अनुकरणीय है....

उन्होंने बताया कि सन् 1996 में आर्यसमाज भरवाई के 81वें वार्षिक उत्सव में हम 24 से 29 जुलाई तक रहे। हमारी ठहरने की व्यवस्था आर्यसमाज में ही की गई थी मगर बरसात के कारण दरियां पानी से भीगी हुई थीं तथा बिछाने के लिए तलाई, ओढ़ने के लिए कोई चद्दर या ताकिया आदि कुछ भी नहीं था। हम जैसे-जैसे सो तो गए मगर नीचे से गीलापन इतना कि हमारे पहने हुए कपड़े भी गीले हो गए, नींद तो कहां आनी थी। मंच पर से एक सूखी दरी बिछाई और आसनों को तकिया बनाया मगर तभी तितलियों के आकार के कुछ बड़े-बड़े जीव आकर हमारे चेहरों पर मंडराने लगे। जैसे-तैसे रात व्यतीत हुई। प्रातःकाल शौचादि के लिए खुले में जाना था मगर साथ पानी ले जाने के लिए कोई भी पात्र आदि नहीं था। सोचा चलो अब जाना तो है ही पानी बाद में ले लेंगे। ज्यों की सड़क के नीचली ओर उतरने लगे तो रेतीली भूमि पर से दोनों ही पांव फिसले और संभलने का कोई मौका न मिलने के कारण बहुत नीचे तक पहुंच गए। वहां से सड़क तर पहुचना और भी अधिक कठिन हुआ क्योंकि चौपाए होकर जितना ऊपर चढ़ते थे रेतली भूमि पर फिसलकर उतना ही नीचें पहुंच जाते थे। जैसे-जैसे सड़क तक पहुंचे और पीने के लिए एक सुराही में रखे गए जल से आर्यसमाज भवन के नीचली ओर जाकर पानी का प्रयोग किया। अगले दिन बिस्तर आदि की व्यवस्था हो सकी। उसके बाद एक बार पुनः जब गए तो भी ठहरने की व्यास्था ठीक न होने के कारण मुझे बहुत तेज बुखार हो गया। बुखार अगले दिन बढ़ गया मगर उसी स्थिति में उस दिन तीन प्रवचन दिए जिससे बुखार और अधिक तेज जो गया। उधर सत्यप्रियाजी के दान्त में सहनीय दर्द हो गया मगर वे भी भजन गाती रहीं। कहीं कार्यक्रम खराब न हो जाए इस डर से हमने पी०डब्ल्यु०डी० के विश्रामगृह में अपने ठहरने की व्यवस्था की तथा इसका व्यय-भार आर्य समाज पर नहीं डाला (यह पूर्ण सत्य है कि पूज्य महात्मा जी ने आज तक किसी से कुछ नहीं मांगा है।)

उन्होंने एक और प्रसंग इस प्रकार सुनाया कि पंचकूला के आर्य समाज सैक्टर 9 में सन् 1997 में 10 से 16 नवम्बर तक हमारा कार्यक्रम हुआ। इस कार्यक्रम में आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार जी तथा आचार्य विश्वदेव जी आदि अनेक अन्य विद्वान् भी पधारे हुए थे। आचार्य रामप्रसाद जी हमसे बहुत ही अधिक प्रेम करते थे। हमने देखा कि न तो लोग ही उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखते है और न वे

स्वयं ही.... एक दिन ठण्डी पुरियां खाने लगे तो सत्यप्रियाजी ने उन्हें रोक दिया तथा उन दिनों आयोजकों के साथ मिलकर स्वयं सत्यप्रियाजी ने उनके खानपान तथा स्वास्थ्य का ध्यान रखा। आचार्य रामप्रसाद जी ने एक दिन मेरे प्रवचन के बाद बोलने के लिए आए तो बहुत देर तक हमारी प्रशंसा करते रहें.... उन्होंने यह भी कहा कि चैतन्यजी तो अभी पूरी तरह चले नहीं है जब चलेंगे तो हम लोगों से तो बहुत आगे निकल जाएंगे.... एक दिन रात्रि को उनके साथ हम अकेले में बैठकर रात के लगभग 2 बजे तक बातचीत करते रहे थे.... एक दिन हम सभी विद्वान् भी उनके कमरे में देर रात तक बैठे बातचीत कर रहे थे तो उन्होंने कहा कि सभी अपनी-अपनी प्रचार यात्राओं में आए कष्टों के अनुभव बताएं....देखते है कौन कष्ट सहने में प्रथम आता है....आचार्य विश्वदेवजी ने बताया कि एक बार वे किसी कार्यक्रम पर जा रहे थे तो मार्ग में बहुत बड़े-बड़े ओले गिरने लगे.... उनके सिर पर ओलों की चोट पड़ने लगी, उन्होंने अटैची अपने सिर पर रखी और ओलों से अपना बचाव करते हुए कार्यक्रम पर पहुंचे। आचार्य रामप्रसाद जी ने बहुत ही हंसते-हंसते हुए सुनाया कि एक बार उन्हें ऐसे बिस्तर पर सुला दिया गया था जिसकी रजाई में छोटे-छोटे चूहों के बच्चे थे। थोड़ी-थोड़ी देर के बाद चूहे उच्छल-उच्छल कर बाहर निकलते रहते थे। उन्होंने एक अन्य घटना सुनाते हुए कहा कि एक कार्यक्रम पर जाते हुए उन्हें अचानक एक स्थान पर रात पड़ गई और उन्हें रात किसी पुराने खण्डहरनुमा स्कूल में बितानी पड़ी....मैंने कहा कि हमारे साथ तो इससे भी बहुत बड़ी-बड़ी बीसियों की घटनांए घटी है। उनमें से हमने केवल दो ही घटनाएँ (लेख लम्बा हो जाएेगा अतः वे घटनाएँ हम यहां नहीं दे पा रहे है) सुनाई तो आचार्य रामप्रसाद जी ने एकदम गंभीर होकर कहा कि चैतन्यजी आप प्रथम आ गए....अरे इतने कष्ट....

2008 में आर्य समाज 32डी, चण्डीगढ का 25 मई से 1 जून तक कार्यक्रम था मगर मुझे कुछ दिनों से ज्वर था और 21 मई को ज्वर ने भयंकर रूप धारण कर लिया। अपने पारीवारिक डॉ० रमेश जी को दिखाया तो उन्होंने खूनादि टेस्ट करने के बाद कहा कि आपको तो भयंकर रूप से टाईफाईड है अतः आप कार्यक्रम पर बिल्कुल न जाएं आपका जीवन बहुत कीमती है। उधर श्री प्रेमजी को चण्डीगढ़ फोन करके स्थिति बताई तो उन्होंने कहा कि हमारा कार्यक्रम खराब हो जाऐगा। मुझे स्वामी श्रद्धान्नद, लेखराम, गुरूदत्त, स्वामी दर्शनानन्द आदि का स्मरण हो आया जिन्होंने विपरीत से विपरीत परिस्थियों में भी वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए स्वयं को आहुत कर दिया। बहुत विचार करने के बाद अन्ततः जाने का ही निर्णय लिया। स्वयं कार चलाकर हम चण्डीगढ़ के लिए 24 मई को रवाना हो गए

मगर परीक्षा कड़ी थी, मार्ग में बनेर की चढ़ाई पर एकान्त जंगल में कार का टैर पंचर हो गया। हमें स्वयं टैर बदलना आता नहीं था, यतिजी को वहीं जंगल में अकेला छोड़कर कुछ दूर पैदल चलकर और फिर एक ट्रक पर बैठकर आगे जाकर बहुत अनुनय-विनय करके तथा अधिक पैसे देकर एक मैकेनिक को लाया मगर उसने पूरा काम फिर भी नहीं किया....जैसे-तैसे आगे बढ़े ही थे कि रास्ते में ट्रैफिक-पुलिस का सामना हो गया। जल्दी-जल्दी में तथा परेशानी के कारण हम बैल्ट लगाना भूल गए थे अतः हमारा चालान कर दिया गया। इस सबका बड़ा कुपरिणाम यह हुआ कि हमें चण्डीगढ़ पहुंचने में बहुत देर हो गई तथा उस शहर की भूल-भूलैयां में दिन को कार चलाना कठिन हो जाता है और रात्रि को कार चलाना तो मेरे लिए बहुत कठिन हो जाता है। चण्डीगढ़ पहुंचते-पहुंचते हमें बहुत रात हो गई। फिर भी पहुंचना तो था ही सो जैसे-तैसे आर्य समाज पहुंच गए। हमारे पहुंचने पर सभी अधिकारी आदि बहुत प्रसन्न हुए। यज्ञ का ब्रम्हा भी मैं ही था। मई 25 को प्रातः यज्ञ तथा प्रवचनादि ठीक प्रकार से निभ गया मगर प्रवचन समाप्त होते ही मेरा शरीर इतनी बुरी तरह से कांपने लगा कि मंच पर बैठना असंभव हो गया। मैं उठकर सीढ़ियों की रैलिंग का सहारा लेते-लेते कमरे तक बहुत ही कठिनाई से पहुंच पाया। कमरे में पहुंचने पर शरीर और भी अधिक जोर-जोर से कांपने लगा। इतने में सत्यप्रियायति जी, सेवक कश्मीरजी तथा कुछ अन्य अधिकारी भी कमरे में आ गए। मेरा शरीर बहुत ही बुरी तरह से कांप रहा था। मैं डाक्टर रमेश को फोन करने लगा तो मेरे बहुत बुरी तरह से कांपते हुए हाथ से मोबाईल भी नीचे गिर गया। स्थिति बड़ी विकट थी। सत्यप्रियाजी ने डा० रमेश जी से बात की तो उन्होंने फोन पर ही कुछ दिशानिर्देश दिए और तदनुसार उपचार करके अस्थाई रूप से मैं कुछ स्वस्थ्य हो गया मगर जब रात्रि के प्रवचन के बाद भी स्थिति वैसी ही हो गई तो सभी के लिए बहुत चिन्ता का विषय हो गया। मुझे चिन्ता यही थी कि कार्यक्रम को सफल कैसे बनाया जाए। अगले दिन एक महिला डाक्टर के पास गए उसने भी लगभग वही दवाईयां बताई जो डा० रमेश जी ने बताई थी। उन्होंने यही कहा कि आपको ऐसी स्थिति में कार्यक्रम पर नहीं आना चाहिए था आपके शरीर की स्थिति बिल्कुल भी ठीक नहीं है। ईश्वर की कृपा से जैसे-तैसे दवाईयों के सेवनादि के आधार पर कार्यक्रम ठीक प्रकार से सम्पन्न हो गया तो मैनें परमात्मा का बहुत धन्यवाद किया तथा सभी अधिकारी भी प्रसन्न हुए एवं ऐसी स्थिति में भी कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु हमारी प्रशंसादि करने लगे। हमारे साथ ऐसी स्थितियां पहले भी उपस्थित हुई थी मगर हमने वेद-प्रचार को प्रमुखता देते हुए कभी अपने हित-अहित की चिन्ता नहीं की।

उसके बाद 4 से 15 जून तक मोगा में हमारे संचालन मे कन्याओं का वैदिक चेतना शिविर था। सुन्दरनगर आकर डॉ० रमेश जी के पास चेक कराने गया तो उन्होंने कहा कि मैं आपको ऐसी स्थिति में सुन्दरनगर से बाहर जाने की बिल्कुल भी अनुमति नहीं दे सकता। आपको पूर्ण विश्राम करना चाहिए। बात यहाँ भी कार्यक्रम निभाने की थी। सोचा यदि मैं न गया तो शिविर का क्या होगा। बहिन इन्दुजी भी दूरभाष पर बार-बार यही आग्रह कर रही थी। डॉ० रमेश जी को यह आश्वासन देकर कि मैं स्वयं कार नहीं चलाऊंगा सभी वहां पर वे लोग मेरी देखभाल कर लेंगे आप चिन्ता न करें, दवाईयां लेकर हम लोग लगभग बारह बजे मोगा के लिए निकल पड़े। कार चलाने के लिए अनुराग जी को साथ ले लिया। मैं कार की पिछली सीट पर लेट गया और मार्ग में दवाईयों का सेवन करते-करते हम मोगा पहुंचे तो बहिन इन्दु एवं श्री केवलकृष्ण जी बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे कि यदि आप न आते तो हमारे लिए बहुत कठिनाई हो जानी थी। हालांकि वहां तीन स्तरों में प्रवचनादि करने होते थे मगर ठीक खान-पान तथा नियमित दवाईयों का सेवन करते हुए कार्यक्रम ठीक प्रकार से चला। बीच में एक दिन प्रातःकाल के प्रवचन में थोड़ी कठिनाई हुई थी, उस दिन प्रवचन करते-करते ही बहुत जोर से उल्टी आई जिससे प्रवचन बीच में ही छोड़ना पड़....फिर भी परमात्मा की कृपा से यह शिविर बहुत ही सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

एक बार बानप्रस्थ आश्रम रोजड़ गए हुए थे तो वहां नजफगढ़, दिल्ली के कुछ लोग भी उन दिनों आए हुए थे। महात्मा जी ने उनसे चर्चा की कि '2006 में हम भी आर्य समाज मेन बाजार नजफगढ़ में अक्टूबर 13 से 15 तक कार्यक्रम में गए थे। मैंने कुछ दिन पूर्व ही दान्त उखड़वाया था मगर उस ओर से पूरे ही मसूड़े में बहुत ही भयंकर छाले पड़ गए थे जिनमें असहनीय दर्द थी। प्रवचन देने की बात तो दूर मगर मुझसे पतली खिचड़ी भी नही निगली जाती थी। फिर भी मैंने प्रवचन दिए क्योंकि प्रवचन से पूर्व एक डाक्टर जी मेरे उस भाग को इंजैक्शन व स्प्रे द्वारा सुन्न कर देते थे। कार्यक्रम इतना सफल रहा कि लोग निरन्तर समय बढ़ाने की मांग करते रहे और बढ़ाया भी गया मगर अब मरे जबड़ों को दो बार सुन्न किया जाने लगा....एक दिन प्रवचन के दौरान ही एक युवा महिला खड़ी होकर अपनी हरियानवी भाषा में बहुत ही ऊंचे स्वर में मेरे प्रवचनों की प्रशंसा करते हुए कहने लगी कि ऐसे प्रभावशाली प्रवचन हम पहली बार सुन रहे हैं....यदि इनको तकलीफ न हो और यदि संभव हो तो डाक्टर साहब इनके जबड़ो को तीन-चार बार सुन्न किया करें, हम इन्हें घण्टों सुनना चाहते है....' नजफगढ़ से आए उन सज्जनों में एक सज्जन तुरन्त बोले कि वह डाक्टर मैं ही हूँ।

अंधविश्वास-निर्मूलन

पिछले अंक का शेष.... **लेखक- मदन रहेजा, मुम्बई**

अंधविश्वास : 54 : मंदिर में भगवान रहते हैं, तभी तो लोग मंदिरों में जाते हैं- पूजापाठ करते हैं!

निर्मूलन : भगवान सभी स्थान में रहते हैं, हर समय रहते हैं। मंदिर-मस्जिद-गुरूद्वारे- गिरजा घर जितने भी मनुष्य ने अपनी समझ के अनुसार स्थानविशेष बनाए हैं, परमपिता परमात्मा का वास सब जगह है। ईश्वर जर्रे-जर्रे में समाया है क्योंकि ईश्वर सर्वव्यापक है।

लोग पूजा-पाठ करने मंदिरों में जाते हैं तो कोई आपत्तिवाली बात नहीं है। पूजा-पाठ कहीं भी हो सकता है, कभी भी हो सकता है। इसके लिए किसी विशेष मंदिर या किसी विशेष स्थान पर जाने की कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता है तो केवल श्रद्धा और प्रेम की।

बाहरी मंदिरों से कुछ सीखना चाहिए। मंदिर प्रतीक हैं हमारे अपने अंदर बसे मन-मंदिरों के। ईश्वर से मिलने का हमारा हृदय ही सर्वश्रेष्ठ स्थान है जहाँ वह भी बसता है, हम स्वयं (आत्मा) भी बसते हैं। इस मनमंदिर से बढ़कर और कोई स्थान नहीं हो सकता। ईश्वर तो सब जगह विद्यमान है, परन्तु आत्मा इस शरीर में ही बसता है क्योंकि वह (आत्मा) एकदेशी अणु है। अल्पज्ञता के कारण हम ईश्वर को बाहर ढूँढने का प्रयास करते हैं जो व्यर्थ में हमारे जीवन की अनमोल घड़ियाँ गँवा देता है।

प्रभु-भक्त कहीं भी जाएँ, मंदिर जाएँ या मस्जिद में, गिरजाघर जाएँ या गुरूद्वारे, परन्तु इतना अवश्य ध्यान में रखे कि वह परमपिता परमात्मा हमारे अंदर ही रहता है। जहाँ हम हैं वहीं हमारा परमप्रिय प्रभु भी रहता है।

मंदिरों में अवश्य जाना चाहिए। वहाँ का वातावरण देखना चाहिए। वहाँ की पवित्रता को देखना चाहिए। जिन महापुरुषों की मूर्तियाँ है, उनके बारे में-उनके जीवन के बारे में जानकारी लेनी चाहिए। उनके चित्र को देखकर उनके चरित्र के बारे में जानकारी लेनी चाहिए। इसी प्रकार जिस मंदिर में जाएँ, चाहे वह शंकर जी का मंदिर हो या मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र महाराज का, या फिर योगश्वर कृष्ण भगवान का, इन महापुरूषों के चरित्र का ध्यान करें और वैसा ही बनने का प्रयास करें। महापुरुषों के जीवन से ही हम अपने जीवन को वैसा ढालने का प्रयास करेंगे तो किसी हद तक अपना जीवन सुधार-सँवार सकते हैं। भगवान राम, भगवान कृष्ण दोनों ही भारतीय संस्कृति के ऐसे प्रतीक हैं जिन पर नाज किया जा सकता है। अतः उनके मंदिरों से हमें उच्च कोटि के

महात्मा बनने की प्रेरणा मिलती है। बच्चों को भी साथ ले जाएँ ताकि उनको भी हमारे पूर्वजों के बारे में जानकारी मिले।

अपने घरों में ऐसे महापुरुषों की तस्वीरें अवश्य लगानी चाहिएँ। राम और कृष्ण तो हमारे आदर्श हैं। हम-आप भी भगवान बन सकते हैं। ऐश्वर्य, तेज, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य-जिनमें ये छः गुण विद्यमान होते हैं वे भगवान कहलाने के योग्य होते हैं।

भगवान कोई भी बन सकता है परन्तु ईश्वर एक है। न कोई उसकी बराबरी कर सकता है और न कोई उससे महान् हो सकता है। ईश्वर सर्वोपरि है।

मंदिर से कई बातें सीखी जा सकती हैं-

1. **पवित्रता** - तन-मन से निष्कलुष रहना मनुष्य-जीवन के लिए परम हितकारी है।

2. **समर्पण** - समर्पण भावना से ही हम ईश्वर की दया-कृपा के सुपात्र बन सकते हैं।

3. **नियम**- नियमपूर्वक पूजापाठ करने से जीवन अनुशासित होता है जिससे व्यक्ति महान् बनता है- यश और कीर्ति को प्राप्त करता है।

4. **प्रसाद**- बाँटकर खाने को ही प्रसाद कहते हैं। मूर्तियाँ जड़ हैं, खा नहीं सकतीं। अतः ईश्वर की बनाई मूर्तियों (सब जीवों) से मिल-बाँटकर ही स्वयं खाएँ। इससे आपस में मित्रता और घनिष्टता होती है-सुख और शान्ति मिलती है।

5. **स्वच्छता**- मंदिर स्वच्छ होते हैं, इससे यह सीख मिलती है कि हमें अपना शरीर और मन स्वच्छ रखना चाहिए जिसमें प्रभुवर स्वयं बसते हैं। खानपान को शुद्ध करना चाहिये। मनुष्य के खाने योग्य वस्तुएँ ही खाएँ। मांस-मछली खाकर इस प्रभुमंदिर को अशुद्ध न करें। जीव-हत्या से बढ़कर और कोई पाप नहीं होता।

6. **ज्योत**- मंदिरों में मूर्ति के आगे ज्योत जलाते है कि रोशनी रहे, इसका यह अर्थ निकालना चाहिये कि हमें भी सदा अपने मनमंदिर में ज्ञान की ज्योत जलाने की आवश्यकता है ताकि उस ज्ञानरूपी ज्योत से आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार हो सके। आध्यात्मिक ज्योत प्रज्वलित होती है वेदाध्ययन से, सत्संग से, आप्तों के वचनों से, तथा स्वाध्याय से। जिनकी आत्मा सजग होती है वही परमेश्वर के आनन्द को प्राप्त करता है।

7. **अगरबत्ती**- धूप-अगरबत्ती मंदिरों में जलाते हैं, इस कारण कि वातावरण सुगंधित हो। इससे भी सीख मिलती है कि अपने जीवन में श्रद्धा और प्रेम की अगरबत्ती से इस प्रकार का सुगंधित वातावरण उत्पन्न करें कि सभी उस सुगंध से प्रभावित हों और आपस में मैत्रीभाव बना रहे।

8. **भजन-कीर्तन**- मंदिरों में सुबह-शाम भजन-कीर्तन-आरती होती है- भगवान के गुण गाए जाते हैं। इसी प्रकार हम भी अपने जीवन को संगीतमय बनाएँ। प्रातः सायं नित्यप्रति ईश्वर

की स्तुति-प्रार्थना-उपासना किया करें जिससे हम ईश्वर के समीप रहने के अधिकारी बनें तथा प्रभु-कृपा से सदा आनन्द में रहें।

9. नमस्ते- मंदिरों में भक्तजन एक-दूसरे का अभिनंदन करते हैं। कोई राम-राम कहता है तो कोई राधे-राधे तो कोई कृष्ण-कृष्ण। यहाँ भी हमें सीखना चाहिए कि जब भी हम-आप आपस में मिलें तो महापुरुषों के नाम के स्थान पर 'नमस्ते' कहकर हाथ जोड़कर अभिनंदन करें। नमस्ते छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष सभी कभी भी कर सकते हैं। नमस्ते कहना किसी संप्रदाय-मत-पंथ इत्यादि का सूचक नहीं, अतः हम सबको एक-सा मानते हैं। सभी ईश्वर की संतान हैं तो फिर भेदभाव कैसा? जहाँ भेद नहीं वहीं मित्रता बढ़ती है। जहाँ मित्रता है वहाँ प्रेम पैदा होता है। जहाँ प्रेम है वहीं ईश्वर है। कहते हैं गॉड इज लव एंड एव इज गॉड।

10. मंदिर तो जड़ होते हैं- भवन ईंट-पत्थर से बने हैं। कभी बनते हैं तो कभी टूटते भी हैं, परन्तु हमारा मन- मंदिर जहाँ आत्मा और परमात्मा दोनों बसते हैं, सदा एक-साथ रहते हैं। जड़ और चेतन का ज्ञान मिलता है। मंदिरों में बेशक ईश्वर व्याप्त है, परन्तु उन मंदिरों की तस्वीरों में हम नहीं पहुँच सकते, दूसरी ओर हम स्वयं मन में बसे हैं और ईश्वर भी हमारे अंग-संग है जहाँ उससे मुलाकात होती है। तब क्यों न हम अपने प्रियतम से अन्दर ही मिलें। मंदिर प्रतीक हैं मन-मंदिरों के।

अंधविश्वास : 55 : जादू-मंत्र से कई प्रकार के संकट टल जाते हैं!

निर्मूलन : जादू और मंत्र अलग-अलग क्रियाएँ हैं। हाथ की सफाई को, जो जल्दी पकड़ में न आ सके, देखनेवाला चकित रह जाए, बुद्धि मानने से इन्कार करें, परन्तु आँखों से जो देखा है वह भी सत्य है- इस प्रकार की परिस्थिति को 'जादू' नाम दिया गया है। जादू और चमत्कार में कोई ज्यादा अन्तर नहीं है। जादू खेल-सा होता है। जादूगर इतनी जल्दी हाथ की सफाई से कुछ ऐसा कर दिखाता है कि देखनेवाले उसे सच समझ बैठते हैं, यही जादू की करामात है। दिखने में सच लगता है परन्तु होता इसके बिल्कुल विपरीत है।

मंत्र कहते हैं वेद की ऋचाओं को, जिसमें विचार करने योग्य विषय होते हैं। मंत्रों का प्रभाव अवश्य ही पड़ता है, अगर मंत्रों की कही बातों को ठीक-ठीक समझकर, विचारकर वैसा ही अपने जीवन में व्यवहार में लाएँ, जैसे-मंत्र है 'सत्यं वद' अर्थात् सत्य बोलो। जब तक सत्य को व्यवहार में नहीं लाएँगे अर्थात् हमेशा सत्य नहीं बोलेंगे, तब तक उस मंत्र का प्रभाव नहीं पड़ सकता। सत्य को अपनाने पर जीवन में क्रान्ति आती है और वर्तमान तथा भविष्य उज्जवल हो जाता है। सत्य में सदा लाभ ही होता है- यही मंत्र का प्रभाव है।

मंत्र ईश्वर का चमत्कार है जिसका प्रभाव तुरंत पड़ता है। मंत्र (वेद की ऋचाएँ) के जप से अपने लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। वेद के हर एक मंत्र में मंत्रणा है (विचार है)। उसको अपनाना ईश्वर की आज्ञा का पालन करना है जिसको सरल भाषा में 'धर्म' कहते हैं। ईश्वर की कहीं बातों को जानना-मानना और व्यवहार में लाना ही धर्म है, इसके विपरीत आचरण अधर्म कहाता है।

कहे-सुने-देखे-सूँघे तथा स्पर्श का प्रभाव पड़ता है- संस्कार बन जाता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों से जो भी व्यवहार होता है उन सबका प्रभाव पड़ता है- संस्कार संस्कृत हो जाते हैं। कोई अपशब्द कहे तो उसका प्रभाव पड़ता है- मन विचलित हो उठता है। किसी ने प्रेमभरे शब्द कहे तो उसका असर पड़ता है- मन प्रसन्न हो जाता है। यह सब कहे-सुने शब्दों का प्रभाव है। इसी प्रकार जो कुछ व्यवहार करते हैं उसका भी प्रभाव पड़ता है।

जादू जो सत्य जैसा लगता है परन्तु है नहीं- उसका प्रभाव पड़ता है। जादू को सत्य मानेंगे तो दुष्प्रभाव पड़ेगा और उसे खेल समझकर भुला देंगे तो प्रभाव नहीं करेगा परन्तु स्मृति बनी रहती है। जादू से कोई मुर्दा जिन्दा हो जावे- यह असंभव है। जादू से रोगी ठीक हो जावे, यह भी असम्भव है। अनहोनी कभी होनी नहीं हो सकती और होनी कभी अनहोनी नहीं हो सकती। सत्य सदा सत्य ही रहता है-झूठ हमेशा झूठ ही रहता है।

अंधविश्वास : 56 : दुआ और शाप का असर अवश्य होता है!

निर्मूलन : ईश्वर से की गई प्रार्थना को ऊर्दू में दुआ कहते हैं और किसी के दुखते दिल से निकली आह को शाप कहते हैं। जी हाँ, दोनों का ही प्रभाव अवश्य पड़ता है। शब्द का प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार सत्संग (जहाँ सत्य बातों को सुनने वाले भक्त इक्ट्ठा होते है) का प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार कोई दुःखी होकर मजबूरन किसी को (जिसने उसे दुःख पहुँचाया है) ऐसी बात कह दे जिससे कहने वाले की दिल की भड़ास निकल जाए, परन्तु सुननेवाला भी भयभीत हो जाए और उसे सच समझ ले- उसे शाप या बद्दुआ कहते हैं।

दुआ 'प्रार्थना' और बद्दुआ 'शाप' को ही कहते है।

माता-पिता-गुरू-अतिथि इत्यादि आशीर्वाद देते हैं- दुआ देते है जिससे मन को अच्छा लगता है- कहने और सुननेवाले को- दोनों को- प्रेम की डोर में बांध लेता है। कहते हैं ना- जहाँ दवा काम नहीं करती वहाँ दुआ काम करती है। दुआ से मन शान्त हो जाता है- मानसिक स्थिति को बल मिलता है और अनेक प्रकार के मानसिक रोग ठीक हो जाते हैं। ईश्वर

से की गई प्रार्थना का प्रभाव तो अवश्य पड़ता ही है, और अगर वह प्रार्थना उचित धर्मपूर्वक और हर संभव परिश्रम करने के पश्चात् की गई हो-तो ईश्वर अवश्य उसे वरदान देते हैं। यह सत्य है।

किसी को बद्दुआ दे दो कि तू मरेगा और जल्दी ही मरेगा! क्या वह मनुष्य सचमुच में जल्दी मरेगा? यह निपट भ्रान्ति है। जिसको इस प्रकार की अत्यन्त कठोर बद्दुआ मिली है सचमुच में उसका हृदय तो कमजोर पड़ ही जाएगा क्योंकि उसने वैसा कुकर्म किया होगा जो इस प्रकार का शाप उसे मिला है। उस व्यक्ति की मानसिक स्थिति असंतुलित हो सकती है-उसका पाप उसको सदा खाए रहता है- हर वक्त उसे वह शाप याद रहता है- मरने की गूँज उसे सुनाई देती है और हो सकता है इसी बेखबरी में उसका एक्सीडेंट हो जाए और वह सचमुच मर जाए। यह श्राप का असर हुआ। परन्तु यहाँ समझनेवाली बात यह है कि क्या उसको श्राप ने मार दिया? नहीं, और हाँ भी! अगर उस व्यक्ति ने कोई गलत काम नहीं किया था और गलतफहमी का शिकार होकर किसी ने उसे अज्ञानतावश श्राप दिया है तो उसका प्रभाव उस सच्चे व्यक्ति को विचलित नहीं कर सकता। और अगर सचमुच उस व्यक्ति ने कुकर्म किये हैं तो उस बद्दुआ का असर उसे तड़पाता रहेगा और मानसिक बल जाता रहेगा और उसकी दुर्दशा होगी।

सच्चा इन्सान किसी से नहीं डरता। वह केवल ईश्वर से डरता है, और झूठा आदमी सबसे डरता है क्योंकि वह ईश्वर की कर्मफल की व्यवस्था में विश्वास नहीं रखता।

परमपिता परमात्मा सर्वान्तर्यामी है- सर्वज्ञ है। माँगना है तो ईश्वर से मांगों। कुकर्मों से बचो। ईश्वर सदा सबको देख रहा है, उससे कोई काम छुप नहीं सकता। किसी का भला करने की क्षमता नहीं तो कभी किसी का बुरा भी न करो। किसी के लिए बुरा भी मत सोचो। कहीं ऐसा न हो कि जो दूसरों के लिए बुरा सोचते हैं वही अपने पर बन आए। सभी का भला चाहो- किसी को बद्दुआ मत दो- सबके लिए वाणी से भद्र ही बोलो, बाकी सब ईश्वर की न्याय-व्यवस्था पर छोड़ दो। सबके किये का फल वह परमपिता परमात्मा देता है। किसी को श्राप देकर, बद्दुआ देकर क्यों अपने अंदर गंदे संस्कारों के बीज बोते हो? इससे द्वेष बढ़ेगा- मन अपना भी तो दुःखी ही होगा।

सबकी भलाई में ही अपनी भलाई है। 'सर्व भवन्तु सुखिनः' इस श्लोकांश को विचारो और अपने व्यवहार में लाने का प्रयत्न करते रहो।

अंधविश्वासः 57: कोई बुरा करे तो हम कैसे भला कर सकते हैं।

निर्मूलन : सबसे प्रीतिपूर्वक यथायोग्य वर्तना चाहिए, बाकी सब ईश्वर पर छोड़ देना

चाहिए- इसी में सबकी भलाई है। (जी हाँ, कहना आसान है, करना मुश्किल होता है)

सभी अपनी-अपनी समझ के अनुसार काम करते हैं। बुरा करनेवाले बुरा करते हैं और अच्छा करनेवाले अच्छा। सब मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है, परन्तु सबके कर्मों का फ़ल तो ईश्वर को ही देना है- इस विधि के विधान को समझने का प्रयास करें और विश्वास रखें कि आपका किया आपको ही मिलनेवाला है। अच्छा करेंगे तो आपको ही अच्छा मिलेगा और जो लोग बुरा करते हैं उन्हीं को बुरा मिलेगा। ईश्वर तो न्यायकारी है-सर्वज्ञ है-सर्वान्तर्यामी है। जो जिस भावना से काम करता है ईश्वर वैसा ही फल उसे देता है। अगर ईश्वर में आपका पूर्ण विश्वास है तो इसकी बिल्कुल चिन्ता न करें कि अमुक मेरे साथ कैसा बर्ताव कर रहा है। ईश्वर देख रहा है, सुन रहा है- इसको ध्यान में रखकर आप कोई ऐसा कार्य न करें जिससे आप स्वयं उस लपेटे में आ जाएँ। ईश्वर को हाज़िर-नाजिर जानकर जितना हो सके, यथाशक्ति शुभकर्म करते रहें-निष्काम कर्म करते रहें। बुरा कर्म करनेवाले के साथ भी अच्छा व्यवहार करें- सब ठीक हो जाएगा।

बुरे आदमी के साथ संबंध न रखे- उससे व्यवहार न करें- उससे दूर रहें- द्वेष कभी न करें- कभी भी उसका अहित न चाहें- बुरा भी भला बन जाएगा।

अंधविश्वास : 58 : सच्चे देवी-भक्तों के शरीर में 'माता' का आना संभव है।

निर्मूलन : भौतिक शरीर को चलानेवाला अपना एक ही आत्मा होता है जिसके साथ-साथ परमात्मा भी रहते हैं। एक शरीर में एक ही आत्मा होता है। आजकल जो यह भ्रान्ति फैली हुई है कि प्रायः किसी-किसी स्त्री के शरीर में सायं या रात्री के समय देवी माँ का आगमन होता है शरीर काँपने लगता है-बाल बिखर जाते हैं- आँखें चढ़ जाती हैं- आवाज बदल जाती है- शरीर झूमने लगता है और शरीर में प्रवेश की हुई माता से जो कुछ पूछो, जवाब मिलता है। इस प्रकार की बातें अक्सर सुनने-देखने में आती है। प्रायः ऐसी बातों को सच मान लिया जाता है। यदि गहराई में उतरकर सोचें तो अपनी नादानी और अज्ञान पर हम स्वयं खीझ उठेंगे।

तनिक इन प्रश्नों पर विचारें- ये कौन-सी माताजी आती-जाती रहती हैं? माताजी रात में ही क्यों आती हैं? सवालों के जवाब माताजी स्वयं ही प्रकट होकर क्यों नहीं देतीं? किसी के शरीर में छुपकर ही क्यों देती हैं? जिस शरीर में आती हैं (प्रवेश करती हैं) उसे कष्ट क्यों कर देती हैं कि शरीर काँपने लगता है? उस माई के होशोहवास क्यों उड़ जाते है कि उसे अपनी सुधबुध भी नहीं रहती?

बालों बिखेरने का क्या मतलब है? थोड़ी ही देर के लिए 'माता' आती हैं तो जल्दी क्यों चली जाती हैं? पुरुषों के शरीर में क्यों नहीं आती? सबके शरीर में क्यों नहीं आती? माता अपने नाम स्थान-स्थान में क्यों बदलती रहती हैं? इस प्रकार के अनेक प्रश्न उत्पन्न होते हैं। इसका विद्वान् स्वयं ही तर्क करके, विवेक के साथ उत्तर ढूँढ सकते हैं।

प्रिय बंधुओं! यह कौन-सी माता जी हैं हम नहीं जानते। माता तो ममता में भरकर अपने पुत्र-पुत्रियों को जन्म देती है, पालन-पोषण करती है, उन्हें होनहार बनाती है। भला वह क्यों किसी के भी शरीर में घुसकर बैठ सकती है? जन्मदात्री माता तो ऐसा नहीं करती।

पृथ्वी माता- जो रोटी-कपड़ा-मकान देती है, भोजन की सब सामग्री प्रदान करती है, कभी कुछ लेने की इच्छा नहीं करती- वह तो देवी है। भला पृथ्वी माता किसी के शरीर में घुस सकती है? कभी नहीं, क्योंकि इतनी बड़ी विशाल पृथ्वी छोटे से शरीर में कैसे समा सकता है। जड़ होने के कारण पृथ्वी सवाल-जवाब नहीं कर सकती। जड़ में ज्ञान नहीं होता।

वेदमाता अर्थात् ज्ञानमाता अर्थात् परमपिता परमात्मा। सबकी जननी-वेदमाता= ईश्वर। जो सर्वव्यापक है, जिसका ज्ञान पाने से मानवमात्र का उद्धार होता है, वह भगवान 'माता' क्यों बनेगा? सर्वान्तर्यामी होने से वह तो पहले से ही हम आत्माओं के अंग-संग है। भला उस सर्वव्यापक परमपिता परमात्मा का अवतरण कैसे हो सकता है? ईश्वर दो तो हो नहीं सकते। एक तो पहले से ही, सदा से आत्मा के भीतर-बाहर विद्यमान है तो उसका दूसरा अवतरण इस शरीर में कैसे हो सकता है?

इससे यह प्रमाणित होता है कि शरीर में किसी भी माता का अवतरण या प्रवेश नहीं होता- नहीं हो सकता। ये सरासर फिजूल की बातें हैं। अब जो अभी भी इसको सच मानते हैं कि-माता शरीर में आती है-प्रश्नोत्तरी करती है- उनसे ही हम यह पूछना चाहेंगे कि यह कौन-सी माता है जो उनके शरीर में प्रवेश करती है?

प्रभु में श्रद्धा करनेवाले भक्तजनों। इस बात को गाँठ बाँधकर रखें कि एक शरीर में केवल एक ही आत्मा का वास होता है जिससे शरीर के व्यवहार होते हैं। किसी अन्य की आत्मा इस शरीर में कभी प्रवेश नहीं कर सकती। मुक्त आत्मा भी चाहे तो ईश्वर की व्यवस्था को भंग नहीं कर सकती। मुक्तात्मा ब्रह्माण्ड में स्वेच्छा से कहीं भी भ्रमण कर सकती है, परन्तु शरीर में घुसना, घुसकर बैठना, प्रश्नों के उत्तर देना कभी नहीं हो सकता।

सच तो यह है कि ऐसे पाखंड करके लोगों को 'माता के जागरण' करवाने की दूकानदारी का विस्तार किया जाता है। इस

बहाने तर माल उड़ाने और लोगों को ठगने की क्रिया चालू रहती है। धर्म के नाम पर ऐसी ठगबाजी की पोल खोलनी चाहिए, ताकि धूर्त लोगों से सच्चे भक्तों की आस्था न टूटे।

कुछ देर बाल खोलकर शरीर झुलाने से मानसिक स्थिति बिगड़ जाती है, शरीर में कंपन होने लगता है, भक्तिन अपने आप कुछ भी बड़बड़ाने लगती है। झूमना, बाल बिखेर देना- ये भीड़ जुटाने के ढ़ोग हैं। इतना तो सत्य है कि किसी माता का हमारे शरीर में प्रवेश नहीं हो सकता।

यह सरासर धूर्त लोगों की चालबाजियाँ हैं। यह उनका धंधा बन गया है। नई-नई बातों से साधारण लोगों को जैसे-तैसे लूटना उनका व्यवसाय हो गया है। धन-दौलत की लालसा ने इन्सान को शैतान बना दिया है। इन पाखंडों से दूर ही रहें।

अंधविश्वास : 59 : सिद्ध योगी जब चाहें रूहों को बुला सकते हैं।

निर्मूलन : यह भी पोपलीला है। इस पोपलीला को मैंने स्वयं देखा है। सब झूठ है, बकवास है, इसमें रत्ती-भर भी सच्चाई नहीं। ये सब धन ऐंठने के पाखण्ड हैं। ऐसा तमाशा आपने भी देखा होगा-

मेज पर या काँच की टेबल पर काँच का ग्लास उल्टा रखा जाता है। तीन-चार लोग ग्लास को अँगुली लगाते हैं। जो रूहां को बुलाने का कार्य करते हैं वे लगातार कुछ पढ़ते हुए किसी की आत्मा का आह्वान करते हैं या किसी विशेष आत्मा को बुलाते हैं कि इस ग्लास में आ जाओ। इधर ग्लास पर जो लोग उँगलियाँ धरे होते हें उनके हाथों में हरकत आती हैं, ग्लास हिलने लगता है और किसी भी दिशा में खिसकने लगता है।

ग्लास पर धरे हाथ या उँगलियाँ कभी स्थिर नहीं रहते- कंपन् होता ही रहता है। कंपन (Vebration) हो और थोड़ा सा भी हाथ हिले तो ग्लास तो हिलने ही लगेगा। एक बार वह ग्लास हलचल (Motion) में आया तो आगे बढ़ता जाता है।

पहले से ही ग्लिास के नीचे Plain Paper (सादा कागज) रखा जाता है जिस पर चारों ओर स्याही से कई खाने बनाकर 'हाँ-ना, कुछ-कुछ, संभव, असंभव, शीघ्र, धीमा' लिखा होता है। उसके ऊपर ग्लास रखते हैं। जिस भी दिशा (Direction) में ग्लास चले और रूके, खाने में लिखे-अनुसार बूझा जाता है कि जो कुछ पूछा गया है उसी का उत्तर मिला है।

जब ग्लास हाथों की हरकत से हिलता है तो जिन लोगों ने ऊँगली रखी है वे कुछ संभल जाते हैं और इतनी देर में ग्लास कहीं भी रूक जाता है। जहाँ कागज पर 'हाँ' या 'ठीक' लिखा होता है, लोगों का ध्यान वहीं होता है और ग्लास को उसी (Direction) दिशा में हिलाया जाता है।

शेष अगले अंक में...

स्वामी दयानन्द स्टडीज सैन्टर

बड़े हर्ष का विषय है कि यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन भारत सरकार की ओर से प्रदत्त आर्थिक सहयोग से दोआबा कॉलेज जालन्धर में ''स्वामी दयानन्द स्टडीज सैन्टर'' सत्र 2014. 15 से स्थापित किया गया है। इस सैन्टर के माध्यम से स्वामी दयानन्द की शिक्षाओं को विद्यार्थियों तथा आम जनता तक पहुंचाने के साथ-साथ शोधकार्य, संगोष्ठी, कार्यशाला आदि भी आयोजित किए जाएंगे। स्वामी दयानन्द के समस्त साहित्य को डिजिटल रूप में इण्टरनेट (www.doabacollege.net)पर उपलब्ध कराने की योजना भी तैयार की गई है। सभी आर्य समाजों के पदाधिकारियों, आर्य समाजिक संस्थाओं तथा आर्यजनों से निवेदन है कि यदि उनके पास स्वामी दयानन्द का कोई भी ग्रन्थ किसी भी भाषा में किसी भी फॉन्ट (चाणक्य, कृतिदेव, शूषा आदि) में कम्पोज किया हुआ है तो वे हमारे email : dayanandstudy@doabacollege.net पर वह सामग्री भेजने की कृपा करें। हम उस सामग्री को इन्टरनेट के लिए यूनिकोड फॉण्ट में परिवर्तित कर कॉलेज की उपरोक्त वैबसाइट पर अपलोड कर देंगे। आशा है कि ऋषिवर दयानन्द के इस पुनीत कार्य में आपका सहयोग हमें अवश्य प्राप्त होगा।

आर्य समाज अलीगंज का हीरक जयन्ती सम्पन्न

आर्य समाज अलीगंज (जमुई) द्वारा आयोजित 12.13.14 मार्च 2015 तक राष्ट्ररक्षा महायज्ञ एवं वेद प्रचार महोत्सव उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुआ जिसका उद्घाटन बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता जी ने दीप प्रज्जवलित कर किया। यज्ञ के ब्रह्म पद को सुशोभित करते हुए पंडित संजय सत्यार्थी ने उपस्थित अनेक यज्ञमानों को यज्ञोपवित देकर, इसके महत्व को समझाया। सहस्त्रों लोगों ने यज्ञ में आहुति देकर महर्षि दयानन्द प्रणीत यज्ञ को समझा और लाभ उठाया। मुख्य वक्ता के रूप में आचार्य वेद प्रकाश जी श्रेत्रिय द्वारा मानव निर्माण पर सार गर्भित व्याख्यान हुये। पंडित श्री दिनेश दत्त एवं अमृता आर्या जी के पावन मधुर भजनोपदेश ने श्रोताओं को भाव विभोर कर दिया। त्रिदिवसीय इस कार्यक्रम में विद्वानों ने ज्ञान की अजस्न धारा प्रवाहित कर दी जिसमें नगरवासी स्नान कर कृतार्थ हुये। इस अवसर पर वयोवृद्ध आर्य श्री युगल नारायण आर्य जी को जिला आर्य सभा की ओर से सम्मानित किया गया। मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा की गोष्ठी भी सम्पन्न हुई जिसमें बीस से अधिक आर्य समाज के

अधिकारियों ने भाग लेकर आर्यसमाज की दिशा और दशा पर विचार करते हुए ऋषि के विचारों को जन मानस में फैलाने की योजना बनाई। गोष्ठी में श्री डाक्टर बच्चू लाल आर्य प्रधान प्रमण्डलीय सभा, श्री राम प्यारे प्रसाद रजौली, श्री अशोक आर्य बिहार शरीफ, श्री सन्तशरण आर्य नेमदार गंज, श्री ब्रह्मदेव आर्य चेवाड़ा, श्री गोपाल आर्य जमुई, डॉ० ज्ञान प्रकाश आर्य शेखपुरा आदि गणमान्य लोगों ने भाग लिया। स्थानीय आर्य समाज के वरिष्ठ सदस्य श्री छोटे लाल आर्य, प्रोफेसर राज कुमार आर्य, श्री ओंकार नारायण आर्य, श्री सतीश कुमार आदि ने सफलता के लिए काफी पुरूषार्थ किया। ●

आर्य समाज मानपुर का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

दिनांक 15 से 18 मार्च 2015 तक आर्य समाज मानपुर द्वारा वेद प्रचार का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का उद्घाटन श्री राजू बरनवाल नगर पार्षद द्वारा दीप प्रज्जवलित कर किया गया। एक और जहाँ पंडित संजय सत्यार्थी जी के क्रान्तिकारी उद्बोधन ने नगर वासियों को आन्दोलित किया वहीं दूसरी ओर पंडित श्री दिनेश दत्त एवं बहन अमृता आर्या जी के प्रेरणादायी भजनोपदेश से श्रोता अध्यात्म ज्ञान से सरोबोर हुये। मुख्य अतिथि के रूप में बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान सम्माननीय श्री गंगा प्रसाद जी ने अपने उद्बोधन में आर्य समाज को गति देने पर विशेष बल दिया। उन्होंने कहा कि आर्य समाज से जुड़कर ही हम मानवता की रक्षा कर सकते हैं। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा के प्रधान सम्मानीय श्री यू० एस० प्रसाद जी ने कहा कि आर्य समाज से जुड़कर ही हम समाज को सभ्य और श्रेष्ठ बना सकते हैं। इस अवसर पर श्री जाना साहब प्राचार्य डी० ए० वी० स्कूल, मानपुर गया ने भी उपस्थित होकर लोगों में प्रेरणा का संचार किया। प्रधान श्री बच्चू लाल आर्य जी ने सभी आगत अतिथियों का शाल उढ़ाकर एवं पुष्प माला पहनाकर सम्मानित किया। श्री डॉ० अशोक आर्य, श्री सत्येन्द्र कुमार, श्री उपेन्द्र आर्य आदि कार्यकर्त्ताओं ने सफलता के लिये काफी परिश्रम किया।●

गुरूकुल हरपुर जान सारण का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

दिनांक 2,3,4 मार्च 2015 तक आयोजित त्रिदिवसीय वेद प्रचार आयोजन गुरूकुल हरपुर जान सारण के प्रागण में किया गया। गुरूकुल के संस्थापक श्री कृष्ण बहादुर ठाकुर की जयन्ती के अवसर पर आयोजित इस कार्यक्रम में पंडित संजय सत्यार्थी जी के सारगर्भित प्रवचन एवं पंडित दयानन्द सत्यार्थी जी के भजन एवं उपदेश हुये। विश्व कल्याण यज्ञ में अनगिनत क्षेत्रीय स्त्री–पुरूषों ने यज्ञ की आहुतियाँ देकर पर्यावरण शुद्धि में अपना योगदान दिया। ●

चम्पारण जिला आर्य महा सम्मेलन सम्पन्न

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना के मार्गदर्शन में चम्पारण जिला आर्य सभा एवं आर्य समाज मोतिहारी के संयुक्त तत्वाधान में नगर भवन मोतिहारी के प्रागण में 21 से 24 मार्च तक भव्य आर्य महा सम्मेलन एवं विश्व की समस्त आर्य समाजों ने अपनी सहभागिता सुनिश्चित की। प्रथम दिवस में चैत्र प्रतिपदा आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर प्रात: 8 बजे से ही आर्य जगत के प्रकाण्ड विद्वान् आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय जी के पावन सान्निध्य में विश्व कल्याण महायज्ञ प्रारम्भ हुआ, आकाश वेद मन्त्रों से गूंज उठा। हजारों नर नारियों ने नव सस्येष्टि यज्ञ में आहुति प्रदान की। तत्पश्चात् 2 बजे से बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना के प्रधान श्री गंगा प्रसाद जी की अगुआई में मंत्री श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता एवं उपमंत्री श्री संजय सत्यार्थी की उपस्थिति एवं जिला प्रधान श्री महादेव प्रसाद के निर्देशन में जैसे ही शोभा यात्रा आर्य समाज मोतिहारी के प्रांगण से प्रारम्भ हुई। नगर के मार्ग ऋषि दयानन्द और आर्य समाज के जयकारों से गूंज उठा। जिला मंत्री श्री अजीत शास्त्री, श्री देवेश चन्द्र आर्य, पंडित श्री विनोद शास्त्री, श्री प्रेम कुमार आर्य, श्री सुधीर कुमार, श्री सुमन कुमार आदि अनेक गणमान्य आर्यों ने पूरे चम्पारण जिला से भाग लेकर शोभायात्रा में अपनी जागरूकता का परिचय दिया। शोभायात्रा के समापन के बाद सभा प्रधान श्री गंगा प्रसाद जी ने आशीर्वचन देते हुये समस्त आर्यों के प्रति अपना आभार प्रकट किया और आर्य समाज की सेवा में सबको तत्पर रहने का सन्देश दिये। सभा मंत्री श्री रमेन्द्र गुप्ता जी ने भी अपने उद्‌बोधन में कहा कि समस्त आर्य ऋषि आर्यों के प्रति सजग रहें और पूरे मनोयोग से आर्य समाज का कार्य करते रहें। सत्यार्थी जी ने भी अपने उद्‌बोधन में प्रत्येक आर्यसमाजी को चिन्गारी बताते हुये भ्रष्टाचार एवं अन्धिचार से जुझने का सन्देश दिया। शान्ति पाठ के उपरान्त सभा समाप्त कर दी गई।

पुन: संध्या 6 बजे से देहरादून से आये पंडित सत्यपाल सरल जी के भजनों द्वारा कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया जिसमें आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक, आचार्य वेद प्रकाश श्रेत्रिय, पं० व्यास नन्दन शास्त्री जी के पावन उपदेश निरन्तर 4 दिनों तक श्रोत्राओं को सुनने को मिला।

इसी कड़ी में दूसरे दिवस में सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री श्री विनय आर्य जी दिल्ली एवं भारत सरकार के कृषि मंत्री श्री राधा मोहन सिंह जी की गरिमामयी उपस्थिति नें सभा की शोभा बढ़ाई। श्री विनय आर्य जी के उद्‌बोधन ने युवकों में चेतना का संचार किया वहीं श्री राधा मोहन जी ने आर्य समाज के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुये अपने निधि से 10 लाख रूपये आर्य समाज मोतिहारी के विकास के लिय देने की घोषणा की। इस अवसर पर संजय सत्यार्थी द्वारा प्रकाशित वैदिक वाड़्मय फोल्डर एवं चम्पारण जिला सम्मेलन स्मारिका का विमोचन भी हुआ। कार्यक्रम की सफलता के लिये चम्पारण जिला के समस्त आर्यगण बधाई के पात्र है।

और मृत्यु आदि भी संभव है।

इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा आदि आभूषण ही सबसे उत्तम आभूषण है, जिसे धारण कर व्यक्ति सूभूषित होता है, इस लिये माता-पिता का कर्त्तव्य कर्म, परमधर्म और कीर्ति का काम है, जो अपने संतानों को तन-मन-धन से विद्या, धर्म, सभ्यता और शिक्षा युक्त करें। कभी भी दुराचारी अध्यापक या अध्यापिका से संतानों को शिक्षा न दिलावे।

दुख के साथ कहना पड़ता है कि आज के भौतिकवादी युग में शिक्षा का स्वरूप ही बदल गया है। लोग पढ़-लिखकर सरकारी नौकरी प्राप्त करने को ही शिक्षा का लक्ष्य समझ रहे है। जो जितनी बड़ी डिग्री ले लिया वह उतना बड़ा शिक्षित हो गया। चाहे वह धर्म और संस्कृति के ज्ञान से कितना ही न्यून क्यों न हो। मात्र स्नातक कर लेना ही शिक्षित व्यक्ति का मापदण्ड बन गया है। आज शिक्षा के हर क्षेत्र में गिरावट ही गिरावट है। नैतिक शिक्षा का लोप हो चुका है। जिसके कारण व्यक्ति साक्षर तो हो रहे शिक्षित नहीं।

शिक्षा में इन्द्रिय संयम, भाव शुद्धि, स्वाध्याय प्रेम, वृद्धजनों की सेवा, वाणी और मन की शुद्धि सम्मान की इच्छा का त्याग और वेदाध्ययन की रूचि का समावेश होना चाहिए। जब-तक ऐसे गुण जीवन में नहीं आयेंगे तब तक शिक्षा को उच्च स्थान प्राप्त नहीं हो सकता। आज शिक्षा का मूल्यांकन करना होगा। जिस शिक्षा ने संसार को एक आदर्श दिया, राष्ट्र के प्रति प्रेम सिखाया, छोटे से प्यार बड़ों को सम्मान करना सिखाया, सर्वे भवन्तु सुखिनः का संदेश दिया, अच्छे-बुरे का अंतर करना सिखाया, बैर बुद्धि का त्याग कर उन्नति का मार्ग दिखलाया, वाणी और मन को पवित्र कर शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना सिखाया, इसी शिक्षा का अवलम्बन आज भी समय की मांग है।

सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानन्द ने जो शिक्षा के नीति निदेशक तत्व बतलाये हैं इस पर राष्ट्र स्वस्थ मन से चिंतन करे। राष्ट्र के सर्वांगीण विकाश के लिये उत्तम शिक्षा का होना अति आवश्यक है। उत्तम शिक्षा केवल और केवल आर्ष ग्रंथों में ही पाये जा सकते हैं अन्यथा कहीं नहीं।

पं० संजय सत्यार्थी
सह सम्पादक

आर्यसमाज के नियम

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान् न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।
5. सब काम धर्मानुसार, अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीति-पूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये। किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व-हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये। और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

प्रेषक
सभा मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-800 004

सेवा में,
श्री/मेसर्स
ग्रा०
पो०
जिला

सम्पादक जी
संदेश दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
हनुमान रोड, नई दिल्ली-1

मुद्रित सामग्री

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुदित एवं प्रकाशित।